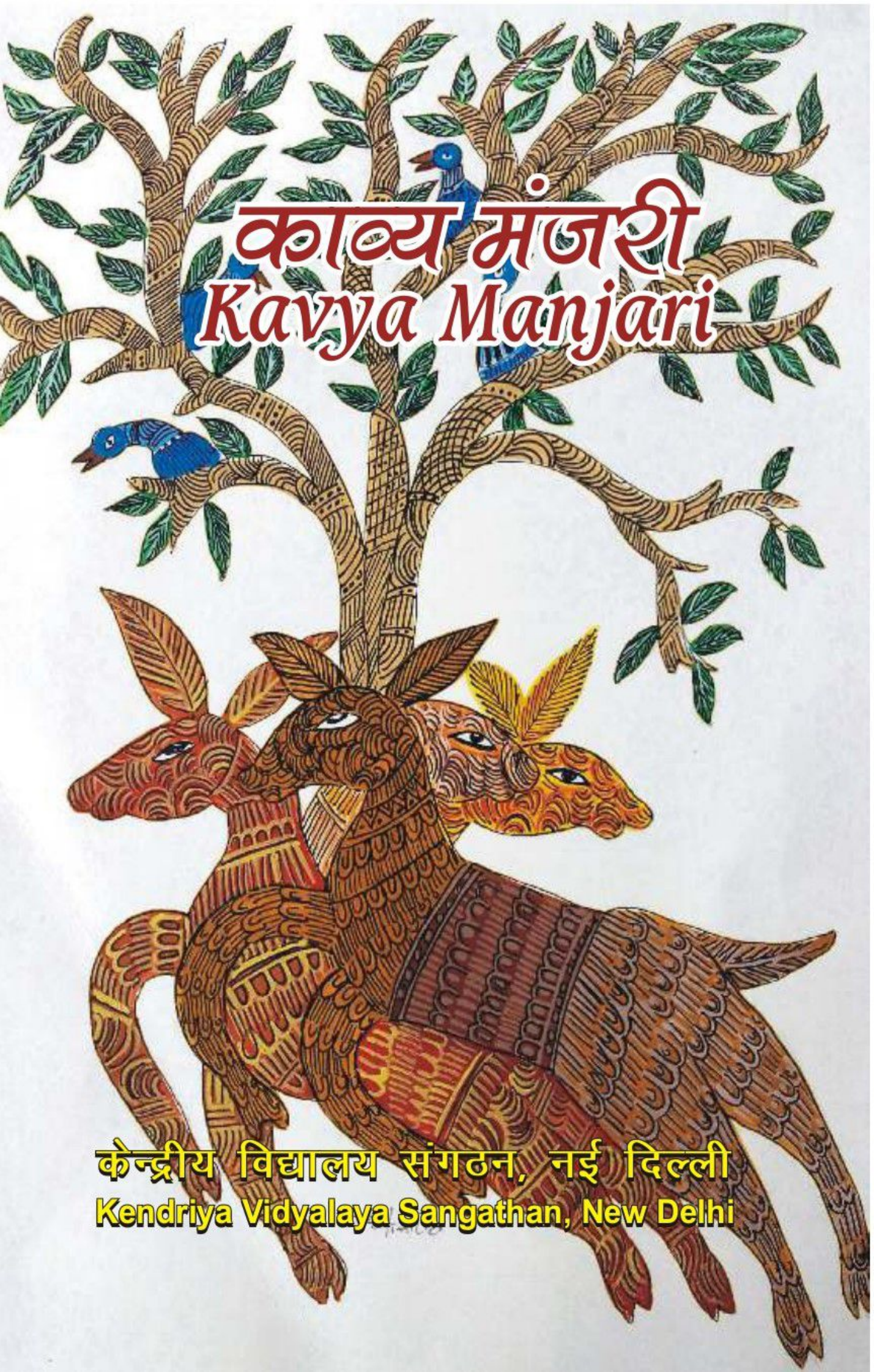

काव्य मंजरी
Kavya Manjari

केन्द्रीय विद्यालय संगठन, नई दिल्ली
Kendriya Vidyalaya Sangathan, New Delhi

काव्य मंजरी

भाग-11

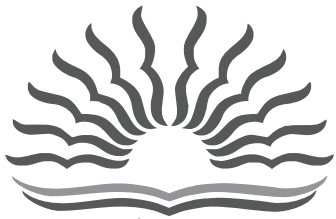

केन्द्रीय विद्यालय संगठन, नई दिल्ली

© केंद्रीय विद्यालय संगठन

काव्य मंजरी, भाग–11

शिक्षक दिवस–2017 के उपलक्ष्य में प्रकाशित केंद्रीय विद्यालय शिक्षकों एवं अन्य कर्मचारियों द्वारा रचित कविताओं का संकलन

कुल प्रतियां: 1600/–

मार्गदर्शन : **संतोष कुमार मल्ल**
आयुक्त, के.वि.सं
संपादक : **डॉ. शची कांत**
संयुक्त आयुक्त (प्रशिक्षण)
संपादकीय प्रभारी: **सचिन राठौर**
सहायक संपादक, के.वि.सं. (मु)
प्रूफ रीडर : **नेगपाल सिंह**
के.वि.सं. (मु)
आवरण पृष्ठ : **होसला राव**
प्रशिक्षित स्नातक शिक्षक (कला),
के.वि. सीहोर

अपर आयुक्त (शैक्षिक), **उदय नारायण खवाड़े,** केंद्रीय विद्यालय संगठन, मुख्यालय, नई दिल्ली, द्वारा प्रकाशित

मुद्रक : **डॉल्फिन प्रिंटो–ग्राफिक्स,** 4ई/7, पाबला बिल्डिंग, पहली मंजिल, झण्डेवालान, नई दिल्ली–110055

दो शब्द

काव्य मंजरी का 11वां अंक सुधी पाठकों को सौंपते हुए मुझे सुखद अनुभूति हो रही है। यह प्रकाशन विभिन्न स्तरों पर कार्यरत हमारे शिक्षकों एवं अन्य सहकर्मियों के रचनात्मक कौशल की सुंदर अभिव्यक्ति है।

इस अंक में समाहित रचनाओं में शब्दों की कला, कल्पना की उड़ान एवं संवेदनाओं के चित्रण से एक ओर काव्य के नैसर्गिक सौंदर्य को तराशा गया है, वहीं दूसरी ओर रचनाओं में जीवन–मूल्यों से साक्षात्कार की सहज अनुभूति मिलती है।

रचनाकारों द्वारा अत्यंत सरलता से जीवन के विविध आयामों को जिस कला से शब्दों में पिरोया गया है, वह वास्तव में अद्‌भुत है। अपने साथियों की रचनात्मक प्रतिभा से प्रेरित होकर मैं भी दो पंक्तियों में अपनी शुभकामनाएं अर्पित करता हूं:

कवि ही नहीं तुम काव्य बनो,
साधन नहीं तुम साध्य बनो।

जीवन हो धवल, उज्ज्वल, निर्मल,
तुम जन–जन के आराध्य बनो।।

आशा करता हूं कि आपके सकारात्मक सुझावों से आने वाले अंक में और अधिक गुणात्मक सुधार आएगा।

हार्दिक शुभकामनाओं के साथ,

संतोष कुमार मल्ल
आयुक्त
केंद्रीय विद्यालय संगठन

कविताओं की सूची

क्र	शीर्षक	रचयिता का नाम	पृ.सं.
1	एतदर्थं पठतु मित्र! संस्कृतम्।	धनराज कुमार पाण्डेय	1
2	घर–आँगन की शान है बेटी	आनंद कुमार त्रिपाठी	3
3	संभावनाशील बच्चे	डॉ. मंजुल मठपाल	4
4	कलाम	अजय कुमार श्रीमाल	6
5	नई सदी की आत्मकथा	अजय कुमार	7
6	माँ का संदेश	पंकज सिंह	9
7	अँधेरी कब्र	डॉ. पंकज कपूर	10
8	चलते जाना है मुझे	आनंद बल्लभ पांडे	12
9	बचपन को आकार दें	चन्द्र भूषण पाण्डेय	13
10	संस्कारों की बलि	रजनी तनेजा	14
11	मंजिल	दीपिका पांडे	17
12	कुदरत ही भगवान	अफरोज अंसारी	18
13	चम्पा के फूल	डॉ अंशुम शर्मा कलसी	19
14	हिमालय	डॉ. संगीता डोभाल	20
15	धरती का सौन्दर्य– 'बादल'	दुरग सिंह दाँगी	21
16	मार्गदर्शन एवम् परामर्श	प्रकाश चन्द्र तिवारी	23
17	स्मार्ट फोन	गरिमा जोशी	25
18	गुरू	वेद प्रकाश मीणा	27
19	टकराता चल	हंसनाथ यादव	28
20	हर वृक्ष महाबोधि नहीं होता	महेंद्र कुमार	30
21	चुप	हरिशंकर	33
22	इक मुट्ठी आसमां	ऊषा नरूला	35
23	वन हाइकू	एलगुरी रामनारायण	37

क्र	शीर्षक	रचयिता का नाम	पृ.सं.
24	पहचान का सौदा	जे. प्रसाद	38
25	अंधी दौड़	आशुतोष द्विवेदी	40
26	अब और नहीं	कामिनी सिंघल	42
27	हमारी संस्कृति	कनुप्रिया	44
28	अच्छा हुआ	हेमंत कुमार निर्मल	45
29	नवगीत	डॉ. रामरक्षा मिश्र विमल	46
30	डाली कट रही है	डॉ. मुकेश कुमार गुप्ता	47
31	सृजन	डी. डी. श्रीवास्तव	48
32	भारत महान	आनन्द कुमार त्रिपाठी	49
33	सदभाव और संवेदना	डॉ. हृदय नारायण उपाध्याय	50
34	अनमोल ज़िंदगी	कहकशाँ	51
35	मैं सिर्फ मैं	किशोर कुमार	53
36	पतंग होना चाहता हूँ	कुमार विनायक	56
37	निर्भीक हो आगे बढ़ो	लिली सिंह	57
38	मेरे महबूब वतन	मो. शारिक	58
39	हाँ मैं शिक्षक हूँ	मनीष कुमार त्रिपाठी	59
40	नदी की नियति	ममता शर्मा	60
41	बालक है या बेलदार	मीनाक्षी	61
42	हर कोई मगरूर दौलत के नशे में चूर है	महेश कुमार माही	63
43	वर्षा–कुमारी	डॉ. ओम प्रकाश पाण्डेय	64
44	हवा	अंजू बाला लखेड़ा	65
45	'सच' जालसाज क्यों है ?	आर एन वर्मा	66
46	विडम्बना	डॉ. आर. सी. शर्मा	67
47	मुझे न मिला कर्ज	राज कुमार भारती	68
48	छदम्दूत	रोहित चौरसिया	69
49	सड़क	तेज पाल सिंह	71

क्र	शीर्षक	रचयिता का नाम	पृ.सं.
50	सफलता	संभव जैन निराला	72
51	तुम नादान हो अभी	डॉ. ऋतु त्यागी	73
52	सार्थक गीत कहाँ से लाऊँ	सतीश श्रीवास	74
53	क्यों न तब तारे बनें हम	शिखर चंद जैन	75
54	जीवन	सुमन शर्मा	75
55	पहले लक्ष्य को सोचो	डॉ. उमाशंकर मिश्र	77
56	नीर, नारी और विज्ञान	विजय कुमार अग्रहरि 'आलोक'	79
57	प्रकृति–पिया से नाता जोड़ो	डॉ. विजय राम पाण्डेय	81
58	बेटी है तो सृष्टि है	सी. विजयकुमारी	82
59	अमर बनो	वाई. वी. रत्नम	85
60	अनवरत	टी. आर. चौहान	86
61	अपनी व्यथा कहूँ मैं किससे?	राजेन्द्र झा राजन	87
62	कर्मयोगी	वीणा गुप्ता	88
63	अतीत के आँसू	डॉ. विनय कुमार सिंह गौतम	89
64	जीवन फल	ब्रजेश कुमार	91
65	मुझसे संवाद करो	मुकुल कुमारी ''अमलतास''	93
66	वतन पे मेरे	आलोक जायसवाल 'प्रथम'	95
67	मैंने कह दिया है बेटी को	अवनि प्रकाश श्रीवास्तव	96
68	हिंदी–नमन	उमाशंकर पंवार	98
69	नया विहान	राम सिंहासन ठाकुर	99
70	कोई चिड़िया अब मेरे आँगन में नहीं चहचहाती	स्नेह लता गोस्वामी	100
71	गुरु और शिक्षा	सुशील कुमार ''आजाद''	102
72	जिंदगी के पन्ने	विनोद कुमार तिवारी	103
73	ज़िन्दगी के मायने	डॉ. तरुणा	104
74	जीवन का पल	डॉ मनोज कुमार तिवारी	105
75	दादाजी का बसेरा	लक्ष्मण शिंदे	106

क्र.सं.	शीर्षक	रचयिता का नाम	पृ.सं.
101	Whom I Met?	Biranchi Narayan Das	142
102	Mother's heart Bitterness block blessings	Rashmi Jain Bayati	143
103	Service to GOD	Mujeeb Rahman KT	144
104	Sand Speaks and Rain Listens....!	Vijaya Narasimha C K	147
105	Humanity-Lost in Evolution	N Rakhesh	148
106	A Tribute to Mother Teresa	Jayasree Bhattacharyya	149
107	A Teacher	Debasish Rout	150
108	To My School Teacher	Jitendra Das	152
109	Future Perfect	Jaibala Prakash	154
110	A Veritable Winner	Dr. S. S. Aswal	156
111	Bonded Forever	Rugmini Menon K.	157
112	Query From Cosmos	J.Ramadevi	159
113	KVS-Poetry in Progress	N Shesha Prasad	161
114	Voyage Through Vidayalaya	JSV Lakshmi	163
115	Hey ! Make My Day !	B. Prema	165
116	Tribute Infinite	Ms. B. Lekha	166
117	The Altruist	Manju Pathak	167
118	The Blue Hills	Saptarshi Majumder	168
119	Rise	Shashi Wala	170
120	Walls	Chilukuri Madhuri	172
121	Voice of a Woman	Sagaya Mary P	173
122	A Waking Dream	Veena Lidhoo	175
123	What Lies Beyond?	Pallavi Gogoi	177
124	The Path of My Life Has been Blessed	Swarn Lata Sharma	178
125	AU Reveil	Vimmy Singh	181

1

एतदर्थं पठतु मित्र! संस्कृतम|

भारतस्य प्रतिष्ठायै संस्कृतेः चरक्षणाय।
वेदानां संरक्षणाय ज्ञानानां वर्धनाय च।।
विज्ञानपोषकाय च लोके ज्ञान प्रकाशाय।
अज्ञानताविनाशाय अन्तः करण शुद्धाय।।
व्यवहारे च संस्कृतंसदाचारे च सस्कृतं।
संस्काराय संस्कृतं परिष्काराय संस्कृतम्।।
भारतस्य चैकतायै रक्षणाय वरांगणानाम्।
नारीणांच पूजनाय पठतु मित्र संस्कृतम्।।
नारीशक्तेः च ज्ञानाय पुरुषत्वप्रतिष्ठायै।
मातृ शाक्ति विकासाय भगिनी शक्ति प्राप्ताय।।
प्राचीन ज्ञान बोधाय चेतिहास रक्षणाय।
पुराण बोधज्ञानाय स्मृतेर्ज्ञानविकासाय।।
षडंगानां प्रचाराय षड्शास्त्रेभ्यः च ज्ञानाय।
धर्मार्थकाम मोक्षाय जीवने लक्ष्यप्राप्ताय।।
नैतिक ज्ञान बोधाय राजनीतौ कौशलाय।
प्रजानां च रञ्जनाय प्रजानां च पालनाय।।
मनसा वाचा कर्मणा कर्तव्यतापालनाय।
जितेन्द्रिय भवनाय पठतु मित्र संस्कृतम्।।
आत्मज्ञान विकासाय परमात्मानं प्राप्तये।
जन्ममरण मुक्ताय सायुज्यपद प्राप्तये।।
अहिंसायाः पालनाय हिंसायाः चविनाशाय।
सर्व प्राणि रक्षणाय सर्वहित कामनायै।।

शब्द ब्रह्मज्ञानाय मनो भाव प्रकाशाय।
सर्व ज्ञान प्रबोधाय पठतु मित्र संस्कृतम्।।
सर्व भाषाणां ज्ञानाय शब्दार्थ ज्ञान बोधाय।
भाषा मूल ज्ञानायच पठतु संस्कृतं सदा।।
वन्दे देवानां वाणीं वन्दे वेदानां वाणीं।
वन्दे प्रथमां वाणीं च सर्वभाषाणां मातरम्।।
तन्त्र मन्त्रं च साधकम् अभीष्ट फलदायकम्।
सर्वरोगनिवारकं मृत्युजयं च पालकम्।।
तत्व ज्ञान प्रदायकं योगज्ञानं च रक्षकम्।
नीतिज्ञानं च दायकं राजनी तिप्रदायकम्।।
मातृभूमेः रक्षणाय जीवनं समर्पिताय।
निर्भयतां च प्राप्तये देशस्य च रक्षणाय।।
सुशासन करणाय दुष्टानां परिष्काराय।
राम राज्यस्थापनाय पठतु मित्र संस्कृतम्।।
भ्रष्टाचार नाशायच दुराचार विनाशाय।
सदाचार स्थापनाय सच्चरित निर्माणाय।।
अहंकार विनाशाय स्वाभिमान रक्षणाय।
मानवस्य कल्याणाय पठतु मित्र संस्कृतम्।।
विद्यानां चैव प्राप्तये विद्यार्थीनां कल्याणाय।
गुरुपदं रक्षणाय पठतु मित्र संस्कृतम्।।
रामायणास्य ज्ञानाय महाभारतं ज्ञानाय।
पुराणानां पठनाय पठतु मित्र संस्कृतम्।।

धनराज कुमार पाण्डेय
प्रशिक्षित स्नातक अध्यापक (संस्कृत)
के.वि. से–22, रोहिणी, दिल्ली

2

घर-आँगन की शान है बेटी

खुशबू की हलचल है बेटी, आने वाला कल है बेटी
दरिया की कलकल है बेटी, कभी नहीं निर्बल है बेटी
ईश्वर की अरमान है बेटी, माँ–बाबुल की मान है बेटी
बोझ नहीं आसान है बेटी, दो कुल की अभिमान है बेटी
घर आँगन की शान है बेटी
जीवन की ज्योति है बेटी, खुशियों की पोथी है बेटी
ख्वावों की खेती है बेटी, सागर की मोती है बेटी
मानो तो मेहमान है बेटी, सिंदूरी आसमान है बेटी
हौसलों की उड़ान है बेटी, मंजिल की पहचान है बेटी
घर आँगन की शान है बेटी।

आनंद कुमार त्रिपाठी
टी.जी.टी. (अंग्रजी)
(द्वितीय पाली)
के.वि. न्यू कैंट इलाहाबाद

3
संभावनाशील बच्चे

संभावनाओं से भरे होते हैं बच्चे
आओ, उनमें सृजन के चित्र उकेरें
क्या? वे शोर करते हैं!
मगर कहाँ वे बोर करते हैं?
उनके शोर में भी
अनंत संभावनाओं का विस्तार है
खिलते हैं उनमें कल्पनाओं के गुलाब
निर्मित नित नवीन निखार है
हँसी की फुहारों से भरे होते हैं बच्चे
आओ, उनमें थोड़े रंग मिलायें
क्या? वे क्रोध करते हैं!
मगर कहाँ वे विरोध करते हैं?
उनके विरोध में भी
अनंत अनसुलझी बातों का संसार है
उगते हैं उनमें आकांक्षाओं के सूरज

सोच अबाध अपार है

आओ, उनमें बागों की बहार ले आयें

साहस के बादलों से भरे होते हैं बच्चे

आओ, उनमें निडरता का तूफ़ान जगायें

क्या? वे हिचकिचाते हैं!

मगर कहाँ वे पीछे हट जाते हैं?

उनके हिचकिचाने में भी

स्वर्णिम भविष्य की झंकार है

आओ उनमें रोशनी का संसार ले आयें।

डॉ. मंजुल मठपाल
प्रशिक्षित स्नातक शिक्षक (हिंदी)
के.वि. रानीखेत

4
कलाम

हे दिव्य प्रभामय प्रखर दिवाकर,
पुलकित हुयी थी वसुंधरा तुम्हें पाकर,
महाप्रयाण से हे अदृश्य प्रभाकर,
आलोकित करो पुनः धरा को आकर।

रामेश्वरम के उन सजग पहरों में,
अथाह जलधि की प्रलयंकर लहरों में,
चिरनिद्रा में लेटे सदा को,
क्यों हे 'कलाम' निःशब्दता अधरो में।

हे अणु विज्ञान की अनुपम पताका,
आग्नेयास्त्र के चमत्कृत 'विधाता',
कर्मयोग में रत सदा को,
सकल विश्व को बना अहाता।

मज़हब की थी ना कोई भिन्नता,
अहं, दर्प से सदा विहिनता,
'अजातशत्रु' तुम रहे सदा को,
मुखारबिन्द पर ना कभी खिन्नता।

हे विधाता सुनिये करूण पुकार,
उस दिव्य सुगन्ध की फिर हो बहार,
उस चिराग से प्रकाशित सदा को,
हो हिन्दुस्तान का हर घर–परिवार।

अजय कुमार श्रीमाल
पी. आर. टी.
के. वि. अल्मोड़ा

5
नई सदी की आत्मकथा

आज कहीं धुआं है, कहीं धूल है, कहीं हो रही बमबारी है
जाने कौन–से जग की ये हो रही तैयारी है
भाषाओं में द्वेष पल रहा, जाति–धर्म का खेल चल रहा
क्षेत्रवाद के ज़हर से निकली, स्याह रात अब भारी है
जाने कौन–से जग की ये हो रही तैयारी है।

कहीं धमाकों से दहशत है, कहीं गोलियों से नरसंहार
मानव के इस वहशीपन पर, पशुता भी शर्म से हारी है
जाने कौन–से जग की ये हो रही तैयारी है।

मानवता की राह छोड़कर, विध्वंसों के काले पथ पर
आज चल रहा मानव है, ये अंधी प्रभुता की खुमारी है
जाने कौन–से जग की ये हो रही तैयारी है।

हर सरहद खून से लथपथ है, हर मुल्क का वासी भय–आकुल
वो नई सुबह–नव युग का सपना, ये बात फ़क़त अख़बारी है
जाने कौन–से जग की ये हो रही तैयारी है।

कहीं आसमान से मौत बरसती, कहीं उगलती ज़हर मशीनें
वसुधैव कुटुंब के भाव को आज, कोई निगल रही महामारी है
जाने कौन–से जग की ये हो रही तैयारी है।

स्वार्थ–जनित प्रभुता को छोड़ो, मानवता से नाता जोड़ो
यह धरती रो–रो कहे हमारी, क्यों उस पर जंग ये जारी है
जाने कौन–से जग की ये हो रही तैयारी है।

प्रेम अहिंसा से सिंचित, यह धरती फिर से न्यारी हो,
बन्धुत्व भाव से भरे हुए, नव युग की फिर तैयारी हो,
हाँ, प्रेम भाव से भरे हुए नव युग की फिर तैयारी हो।

अजय कुमार
प्रशिक्षित स्नातक शिक्षक
के.वि. पिथौरागढ़
उत्तराखण्ड

6

माँ का संदेश

माँ ने संदेश लिखा– बोली कैसे हो बेटा तुम
एक–एक कर दिन गिन रही हूँ– आशा है जल्दी आओगे तुम
भेजा था तुमको रण क्षेत्र में– वीरता की परीक्षा देने को
मुझे निराश न करना ऐ लाल– तुम्हें रहना है तैयार जान देने को
इस दूध की कसम है तुमको प्रिय बेटे
माँ का सिर न झुकने देना इस संसार में
भले ही दुश्मन लाख चालें चले तुम्हें डराने को
नेस्तनाबूत कर देना उनके सभी ठिकानों को
अगर लड़ते–लड़ते तेरी जान इस जन्म में जायेगी
तेरी माँ भगवान से लड़कर तुझे फिर से अपना बेटा बनाएगी
अपनी जान की फिक्र बिलकुल न करना रणभूमि में
अरे तू तो मेरा लाल है आने वाले सातों जन्मों में।

पंकज सिंह
पी. जी. टी. (संगणक विज्ञान)
के.वि. भरतपुर (जयपुर संभाग)

7
अँधेरी कब्र

ठाकुर साहब के जहन से
चिपके हैं चंद लम्हे स्टिकर–से
जो आज नहीं तो कल
छूट ही जाएँगे
और बाकी बचेगी, गोंद की कालख
ठाकुर साहब का पुत्र–मोह
चितकबरी बिल्ली के मोह–सा विचित्र है
जो आज उनकी आँखों में
दहशत की किरकिरी बन उभरा है
ठाकुर साहब के बुढ़ापे की ठिठुरन को
उनके इकलौते बेटे की जवानी का
नहीं मिलता गर्म कोट
शहरी चकाचौंध में
गटर का क्लोरिन सना पानी पीते–पीते
बेटे के खून में
भर गई है नफरत की गन्दगी

लोहा तो उसके खून में पहले ही कम था
जो रिश्तों का चुम्बक उसे कहीं खींच पाता
पत्थरों के नीचे दबे पंछी–सा
ठाकुर साहब का गूंगा मन फड़फड़ाता है
निगाहें जोहती हैं बाट अब भी
कि बुढ़ापे को कहीं
लाठी का सहारा मिले
जबकि लाठियों ने दफन कर दी है
कब से अपनी सहारा देने की आदत
और कैद कर दिया है उन्हें
अंधेरी कब्र में।

डॉ. पंकज कपूर
स्नातकोत्तर शिक्षक (हिंदी)
के.वि. जतोग छावनी, शिमला
(हि.प्र.)

8
चलते जाना है मुझे

मंजिलें अभी दूर हैं इन्हें पाना है मुझे।
थकना नहीं, रूकना नहीं, चलते जाना है मुझे।।

एक हार से क्यों हारूं मैं, मेरे हौंसले इतने कम नहीं,
है जुनून मुझ में कुछ करने का, आखिर में जीत होगी मेरी।

है अँधेरा तो क्या हुआ, उजालों को पाना है मुझे।
आए हैं जिसके लिए यहाँ, उसे पाना है मुझे।।

थकना नहीं, रूकना नहीं, चलते जाना है मुझे।।

आनंद बल्लभ पांडे
प्राचार्य
के.वि. उज्जैन
(म.प्र.)

9

बचपन को आकार दें

सूनी आँखों में,
रूखे गालों में,
उलझे बालों में,
थोड़ा सा प्यार दें,
बचपन को आकार दें।

कथाओं की रातों में,
गुड्डे की बारातों में,
नानी की बातों में,
सपनों को संसार दें,
बचपन को आकार दें।

लुका–छिपी के खेलों को,
बचपन के मेलों को
बातूनी बेलों को,
शब्दों के बाण दें,
बचपन को आकार दें।

संगी से लड़ाई को,
माँ की पिटाई को,
दादी की बढ़ाई को,
विचारों का आधार दें,
बचपन को आकार दें।

गीली पलकों को
हठीली झलकों को,
रूठी अलकों को,
मुस्कानों से संवार दें,
बचपन को आकार दें।

खोजी आँखों में,
मीठी बातों में,
नन्हें–नन्हें हाथों में,
शिक्षा की तलवार दें,
बचपन को आकार दें।

ललचाती आँखों को,
कुम्हलाती यादों को,
मुरझाते भादों को,
हंसी की फुहार दें,
बचपन को आकार दें।

मैली काया को,
तिरस्कृत छाया को,
गरीबी की माया को,
जीवन से बुहार दें,
बचपन को आकार दें।

सावन के झूलों को,
मिट्टी के ढेलों को,
मानवता के फूलों को,
नव–जीवन संसार दें,
बचपन को आकार दें।

उँगलियों के पोरों को,
कर्मठ छोरों को,
अपने या गैरों को,
शिक्षा की बयार दें,
बचपन को आकार दें।

चन्द्र भूषण पाण्डेय
स्नातकोत्तर शिक्षक (वाणिज्य)
के.वि., वाहन निर्माणी, जबलपुर, म.प्र.

10
संस्कारों की बलि

मेरे गाँव की एक लड़की
बहुत अल्हड़, पर चुलबुली।
सबकी आँखों का तारा
भाई बहनों की लाड़ली
चहकती, फुदकती
जाने कब हो गयी बड़ी।
ढेर सारे सपने सँजोये
ढेर सी आकांक्षायें लिए
कभी परियों की कहानी में खुद को ढूंढती
मेरे गाँव की अल्हड़
जाने कब हो गयी बड़ी।
फिर एक दिन ऐसा भी आया
ढोल नगाड़ों और मंगल गीतों के बीच
वह नया जोश नई उमंग लिए
फुदकती, इठलाती
नए भविष्य का ताना बाना बुनती
नई राह पर निकल पड़ी,
नए सफर पर निकल पड़ी
मेरे गाँव की अल्हड़
जाने कब हो गई थी बड़ी
पर यह क्या?

वह परियों के चश्में से देखी दुनिया
वास्तविक से कितनी दूर थी
वह नया सफर, वह नयी राह
बस एक छलावा थी
वह जाने कब उसके सपनों को
किरच–किरच कर गई
पर क्या कोई आवाज़ सुन सका? शायद नहीं
उसकी चहक, उसकी चमक जाने कहाँ खो गई
वह नादान जैसे सहम–सी गई
जुबान जैसे पंगु हो गई
भविष्य का गणित मानो शून्य हो गया
विचारशक्ति जवाब दे गई
मेरे गाँव की अल्हड़
जाने कब बड़ी हो गयी
दिन बीते, हफ्ते बीते
बड़ी मुश्किल से हिम्मत जुटाई
एक आशा सँजोये
एक उम्मीद लिए
नए बंधनों को काट
वह गाँव चली आई
पर यह क्या ?

वे सभी अपने, जो
उसकी एक खरोंच से
आहत हो जाते थे,
उसकी आँखों के मोती को,
गिरने नहीं देते थे।
बस मूक हो गए।

खाली आँखों से उसे तकते रह गए,
सब कुछ कितना अनअपेक्षित था
कितना आहत करनेवाला था
वह कुछ पल रुकी, ठहरी, दूसरे ही पल,
चुपके से किवाड़ बंद कर,
वापस चली गयी।

वह गाँव की अल्हड़ लड़की।
एक ही दिन में कितनी समझदार हो गयी,
पर सच तो यह है
कि वह तो संस्कारों की बलि चढ़ गयी
मेरे गाँव की अल्हड़ जाने कब बड़ी हो गयी।

रजनी तनेजा
प्राचार्या
के.वि. वायुसेना स्थल मकरपुरा,
वडोदरा, गुजरात

11
मंजिल

सूरज की पहली किरण, सदा खुशियों का सागर लाये,
नए जोश और नई उमंग से, हर घर में खुशहाली छाए।

नयी सोच और नए संकल्प से, हो नाता अपना,
कर्म भूमि पर हर स्वर गूँजे, पूर्ण हो जाए सपना।

मन चन्दन कर लें हम, सभी दिशाएँ यही गीत सुनायें,
मुस्काता हर फूल खिले, ऐसा हम उपवन बनाएँ।

कदम–कदम को चूमे मंजिल, राहों में फूल बिछाएं,
चारों तरफ़ महकता गुलशन, हर दिल को छू जाए।

प्रकृति, सभी के जीवन का हर क्षण साथ निभाए,
विश्वगुरू बन जाए भारत, जग में परचम लहराएं।

भारत माता की रक्षा के लिए, कदम से कदम मिलाएँ,
आओ आज हम दृढ़ संकल्प कर लें, कोई नया विकल्प बनाएं।

इस भारत को हम से आशा, हम नई ज्योति बन दिखलाएं,
भारत का स्वर्णिम गौरव बन हम विश्व पटल में छा जाएं।

दीपिका पांडे
टी.जी.टी. (हिन्दी)
के.वि. वायुसेना स्थल, मकरपुरा
वडोदरा, गुजरात

12
कुदरत ही भगवान

कभी धूप–चाँदनी कभी बादल हवा,
कभी बरखा गुलिस्तान होती है,
हैरतंगेज नक्काशी कण–कण में भरी,
कुदरत विश्व के प्राण होती है।
कुदरत मौजूद तो हमारा वजूद,
पाबंदियों से सजी लय, ताल, तान, होती है।
नामुमकिन अलफाज़–ए–बयां
कुदरत बड़ी बलवान और महान होती है।
जिन बुलंदियों पर नाज़ तुझे, बिगाड़ना, संवारना, कुदरत के हाथ
विज्ञान के लिए चुनौतियों से भरा इम्तिहान होती है।
रूठती हमसे कुदरती आपदाएं बन
मतलब परस्ती से जब परेशान होती है,
रहमत वफ़ा दोस्ती ममता समेटे किसी न किसी रंग में
बंदगी कि भाषा खूब जानती हमजुबां होती है।
तू चाहेगी एक बार, सौ बार चाहेगी तुझे
न्योछावर कर रहमते मेहरबान होती है।
ढूंढते जिसे मंदिर, मस्जिद, गुरूद्वारे, गिरिजाघरों में
कुदरत उस दाता का वरदान होती है,
मन की आँखें खोलेगा तो जान पाओगे तुम,
ग्रंथों का मूल 'सत्यम, शिवम्, सुदरम' भगवान होती है।
इबादतें कुदरत ही मोक्ष का द्वार है,
यही परमोधाम, परमोधर्म, परमज्ञान होती है।

अफरोज अंसारी
प्राथमिक शिक्षिका
के.वि. वायुसेना स्थल, मकरपुरा, गुजरात

13
चम्पा के फूल

खिल रही चम्पई पंखुरियाँ
कसमसा कर ले मखमली करवट
अभी–अभी सोया खरगोश
शुभ पीत गुलाबी रेशमी
झरती सरसराती संदली पत्तियाँ
लरजती है कुनमुना कर
मेरे छौने की उंगलियां
नन्ही नर्म तितलियाँ
नानी पूजा में रख आई
सफेद रूई की बत्तियाँ
और अभी–अभी, हौले से
खिल उठे सोने में
फिर से, चम्पा के फूल।

डॉ अंशुम शर्मा कलसी
प्राचार्या
के.वि. क्रमांक 2, सर्वे ऑफ इंडिया,
देहरादून, उत्तराखण्ड

14
हिमालय

उत्तराखंड के दिव्य भाल,
नगवर विशाल, गिरिवर विशाल
कवलित कर सकता न तुम्हें काल।
स्वर्णिम उपत्यका धन–गर्जित,
शोभित अधित्यका सुख–संचित।
गंगा–यमुना गति के धाम,
भू की तृष्णा के पूर्ण काम।
ऐ ज्योतिर्मय तुमको प्रणाम।
वन–देवदारु, हिमनद–निर्झर,
देवों के क्रीड़ामयी धाम,
तुम में निहित संपूर्ण सृष्टि,
तुम आभासित योगी निष्काम।
ऐ ज्योतिर्मय तुमको प्रणााम।
कवि–काव्य तुम्हीं से सिद्धनाम,
शोलाधिपति तुम शंभुधाम।
मानव ने यह सब भुला दिया।
हे शोक तुम्हें भी रूला दिया।
तुम पूर्ण बुद्ध, चेतना शुद्ध,
सीमाओं पर दृढ़ एकमेव
तुम जागृत प्रहरी हो सदैव,
उत्तराखंड के दिव्य भाल,
नगवर विशाल, गिरिवर विशाल।

डॉ. संगीता डोभाल
स्नातकोत्तर शिक्षक (हिन्दी)
के.वि. भा.ति.सी.पु.
देहरादून, उत्तराखण्ड

15
धरती का सौन्दर्य- 'बादल'

कोहिमा के उच्च नगों में,
हमने, बादल–दृश्य विहंगम देखा है।
उगते दिनकर का दृश्य मनोहर।
रंग अनेकों लिये है अम्बर।
राग लिये मेघों को हमने,
अबीर उड़ाते देखा है।।

गगन चूमते उच्च नगों ने,
चादर चमन की ओढ़ी है।
ग्रीष्म ऋतु में भौंरैयों ने,
तान अनोखी छेड़ी है।
हरित–वसन की उस चादर पर,
श्वेत गगन को देखा है।।

मेघ अतिथि गिरी बस्ती में,
घूम रहे हैं मद–मस्ती में।
कभी अम्बर में गरज रहे हैं,
रुक–रुक कर वो बरस रहे हैं।
श्रमक्लान्त विश्राम की मुद्रा,
श्वेत तूलों सा देखा है।।

कभी हमने यूँ ही सोचा था,
मेघ गगन के वासी हैं।
रूपहला रूप मनोहर था,
ये उच्च नगों के प्रेयसी हैं।
उतर–उतर कर अम्बर से,
उन्हें घाटी में सोते देखा है।।

घुमड़–घुमड़ कर विचर रहे हैं,
गिरी शिखरों को चूम रहे हैं।
सूरज, चाँद, सितारे इन में;
लुका–छिपी सी खेल रहे हैं।
प्रेम, मिलन का दृश्य अनूठा,
इन्हें रास रचाते देखा है।।

कोहिमा के उच्च नगों में,
हमने, बादल–दृश्य विहंगम देखा है।।

दुरग सिंह दाँगी
प्र. स्नातक शिक्षक (गणित)
के.वि. कोहिमा, नागालैंड

16
मार्गदर्शन एवम् परामर्श

नयनों में हैं स्वप्न सृजन के,
चरणों में ये गति तूफानी।
मिले दरश जो उचित मार्ग का
बाह्य जगत की चकाचौंध में
फैशन की इस अंध दौड़ में।
भाव–श्रद्धा को पुलकित करते,
दे निष्ठा को सुरभित बानी।
व्यथित–दुखित से व्याकुल–बोझिल,
छन्दों को तज लिख देंगे हम,
जन–गण–मन के काल खण्ड पर
अमिट कहानी गढ़ देंगे हम।।
मन में नव संकल्प लिये दृढ़,
हर हृदय के नव उद्यानी।
मिले परामर्श जो दक्ष कुशल से,
इच्छाओं के कानन में हम,
आशाओं के घर आँगन की
दक्ष कुशलता पूरित करते,
करके दूरित तम् अज्ञानी।

तब हम तज स्वर कुंठित–रुंधित
कातरता के बन्धन सारे।
छोड़ पुरानी राहें बढ़ते,
घटते पग के रोधक सारे ।।
सामर्थ्यों से अन्तर्मन को,
आन्दोलित कर अवशेषों को,
अवरोधों को दबा कुचल कर,
अभिरुचियों को जाग–जगा कर,
लियाकतों से आशाओं के
अश्वों पर चढ़ कर देंगे हम
अतल–धरा से व्योम–पवन तक,
बगिया जीवन की बासन्ती सुखदायिनी।।
स्वप्न अधूरे होंगे न तब,
पूरे होंगे जतन हमारे।
पद का ऋतुपति आँगन–उपवन,
धन का पतझड़ बरबस होगा।
हो अवगाहन आशाओं का, विश्वासों से
हर्षित–मधुमित जीवन होगा।।

प्रकाश चन्द्र तिवारी
प्राचार्य,
के.वि., नं. 1, तेजपुर
गुवाहटी, असम

17
स्मार्ट फोन

ये रिश्तों के बीच कौन आ गया ?
कोई और नहीं स्मार्ट फ़ोन आ गया
अब ये ही सबका दोस्त, बन्धु और सखा है,
अजी छोड़िये रिश्तों में क्या रखा है।
की–पैड पे उंगलियाँ जो थिरकती हैं,
क्या हुआ जो माँ की पिंडलियाँ दुखती हैं
फेसबुक की दुनिया चाहे जितनी फेक है,
पर दोस्तों की नज़रों में बन्दा नेक है
इसे पाकर लोगों की 'फीलिंग्स' बड़ी है
आपसी रिश्तों की 'फिलिंग्स' की किसे पड़ी है
सुबह हो या शाम इसके साथ ही बिताते हैं
भूले से अगर कभी मिल जाते हैं,
हल्का सा मुस्कुराकर फिर फ़ोन में लग जाते हैं
शायद इसलिए रिश्तों में मौन सा आ गया,
कोई नहीं जी स्मार्टफोन तो मन को भा गया
रिश्तों की ख़ूबसूरती में आ गया खाई सा गैप
बोलिए कौन जिम्मेदार है
आप मैं या 'वाट्स ऐप'
हाथ जोड़कर नमन कोई करता ही नहीं आजकल
बस हो जाती है दुआ सलाम 'वाट्स ऐप' पर

स्मार्टफोन की दुनिया इतनी रंगीली है,
कि बच्चों ने अपनी पढाई भगवान भरोसे छोड़ी है
कहाँ गए गुल्ली डंडा, कंचे, पतंगों के वो खेल,
बस अब तो 'टेम्पल रन, कैंडी क्रश ऑनलाइन गेम्स की ही रेलम पेल
पहले माँ कहती थी, ''अन्दर आ जाओ पढाई कर लो''
अब माँ कहती है, ''अरे निकम्मो फोन छोड़ो जरा बाहर
की हवा भी ले लो।''
अध्यापक भी प्रोजेक्ट देते हैं इस इंसट्रक्शन के साथ
जाओ गूगल से डाउनलोड करो पूरी–पूरी रात
माँ– बाप ने इन्टरनेट लगवाया ये सोचकर
कि बच्चा कक्षा में अव्वल आएगा
उन्हें क्या पता कि वो प्रोजेक्ट के बहाने
चैटिंग में व्यस्त हो जायेगा
जियो मेरे लाल जी भर के
फ्री डाटा का मज़ा लो रात भर जाग–जाग के
स्मार्टफोन खुद तो स्मार्ट हो गया
हमारे मौरल वैल्यूज की चिता जला के कहीं खो गया
हँसता होगा कोने में ये सोचकर
''वाह क्या मज़ा है इन्हें अपना दीवाना बनाकर''

गरिमा जोशी
प्राथमिक शिक्षिका
के.वि. नं. 1, रूड़की
उत्तराखण्ड

18

गुरू

मैं दुनियां के बियाबां में, कभी का खो गया होता।
तिमिर की स्याह रातों में कहीं, गुम हो गया होता।।
ज़माने की तरक्की से मैं, महरूम हो गया होता।
ग़र जीवन में गुरू का ज्ञान, मुझको ना मिला होता।।

क्या अच्छा है, बुरा क्या है, मुझे मालूम ये ना था।
क्या है आचार शिष्टाचार, मुझे कुछ भी पता ना था।।
खोजता ज्ञान कस्तूरी, कभी का मैं मिट गया होता।
हृदय में ज्ञान का दीपक, ज़लाया तुमने ना होता।।

मैं हूँ तिनका समंदर में, आप मेरे सहारे हो।
मैं तो हूँ डूबती किश्ती, आप मेरे किनारे हो।।
पत्थरों को भी पूज़ा था, अब से पहले बहुत मैंने।
कहीं जो ना मिले मुझको, वो भगवान तुम हमारे हो।।

मेरे हृदय में जो बसती है, वो प्रतिमा तुम्हारी है।
मेरे जीवन को महकाती सी, वो खुशबू तुम्हारी है।।
ये चाहत है मेरे मन की, फ़ना खुद को मैं कर ज़ाऊं।
तुम्हारे चरणों की धूलि में ही, हस्ती हमारी है।।

वेद प्रकाश मीणा
प्राचार्य
के.वि. कांहगाड़
कासरगाड़, केरल

19

टकराता चल

शांति वार्ता विफल हो गई
मचा उपद्रव सीमा पर
आतंकवाद के अड्डे पर
रह–रह बम बरसाता चल,
टकराता चल– टकराता चल।।

छद्म भेष में छिपे आतंकी
देख चुके हैं यह नौटंकी
कारगिल से सीखा नहीं सनकी
सैनिक साथ निभाता चल।
टकराता चल– टकराता चल।।

सावधान सीमा पर रहना
भारत माँ का यही है कहना
सैनिक तू सदा आगे रहना
माँ का दूध बचाता चल।
टकराता चल– टकराता चल।।

सीमा का भूगोल न बिगड़े
बना चमन फिर से न उजड़े
राष्ट्र प्रेम की बलिवेदी पर
आगे कदम बढ़ाता चल।
टकराता चल– टकराता चल।।

काँप रही कश्मीर की घाटी
प्यारे मेरे देश की माटी
मुरझाये मेरे सुमनों पर,
अमृत रस बरसाता चल।
टकराता चल– टकराता चल।।

पाक रहा नापाक पहरूये
आस्तीन का साँप पहरूये
सिर फिरे की इस ताकत को
सीमा से सरकाता चल।
टकराता चल– टकराता चल।।

हंसनाथ यादव
स्नातक शिक्षक (हिन्दी)
के.वि. सीधी, मध्य प्रदेश

20
हर वृक्ष 'महाबोधि' नहीं होता

वृक्ष तो वृक्ष ही है
हरा–भरा,
फूल–फल और पत्तियों से युक्त,
दिन–रात
सार्थकता निभाता है अपनी,
अपने अस्तित्व की,
वृक्ष ही बनकर।

उसका महत्व
कुछ भी नहीं होता
अपने लिए
महज़ एक नाम के सिवा कि
वह आम, नीम, पीपल, बबूल
या फिर गाँव के सीमांत पर खड़ा
क्यों न हो
एक बूढ़ा वट–वृक्ष ही।

अनगिनत लोग
आते हैं उनके नीचे
बैठते हैं,
आंखें उठाकर देखते हैं,
फिर हाथ उठाकर

तोड़ते भी हैं,
और तो और
पनाह तक भी लेते हैं
सुकून पाने के लिए
जब आसमान से बरसती है आग।

फिर उसे
वहीं छोड़ खड़ा
लौट–लौट घरों में जाते हैं
व्यस्तता में अपनी
ध्यान भी नहीं जाता
कभी उनकी तरफ तब!
'स्वार्थ–पूर्ति' हेतु जाते हैं जो वहाँ।'

ऐसे ही कभी
इतिहास के किसी कालखंड में,
एक दिन
एक व्यक्ति निकल पड़ा था
छोड़कर अपना राजसी वैभव
'बुद्धत्व' की प्राप्ति के लिए।
हजारों मील चलता,
यहाँ–वहाँ भटकता,
आकर बैठ गया था एक दिन
न जाने किस घड़ी में
एक वट–वृक्ष की जड़ों में।

बेहद क्लांत–श्रांत
विश्रांति पाने की दृढ़ चाह मैं
बैठा रहा, तो बैठा रहा
और बैठा ही रहा।
शारीरिक थकान
और दुर्बलता ने नहीं छोड़ी थी
ताकत शेष
देखता रहा शून्य आँखों से
अनंत आकाश में अनिमेश।

अचानक फूट पड़ी थी
किरणें ज्ञान की
हृदय की अटल गहराईयों से उसकी
और प्राप्त हो गया था उसे 'बुद्धत्व'
और वह वृक्ष बन गया था
'बोधि–वृक्ष', फिर 'महाबोधि वृक्ष'
धरती के जीवन के इतिहास का
मामूली–सा वह वट–वृक्ष
पहले बोधि, फिर महाबोधि बन गया।

ऐसा सौभाग्य हर किसी वृक्ष का नहीं होता
धरती का हर वट–वृक्ष महाबोधि नहीं होता।

महेंद्र कुमार
टीजीटी (हिंदी)
के.वि. सी.एल.आर.आई.
चेन्नई, तमिलनाडु

21
चुप

कितना सोचता हूँ मैं
इसलिए चुप हूँ मैं।
पर सोच भी कैसी
बिखरी–बिखरी जिसका कोई मकसद नहीं।

कितना सहता होगा वह नन्हा सा पिल्ला,
कितना सहा होगा अब तक और कितना सहेगा
पता नहीं,
उसकी पिछली दोनों टाँगें क्षमताहीन हैं,
जन्म से विकलांग है?

या आते–जाते
उस राह से गुजरते
मानव–मशीनों की दया, पता नहीं।
पर हर वक्त हॉर्न बजाते हुए उसे रास्ते से हटाते।

राह में जब कभी दिख जाता,
पाँव को घसीटते हुए आगे बढ़ता
वेदना एक हृदय में छोड़ जाता।

पर मैं सोचता बस सोचता
हॉर्न बजाता अपनी गाड़ी को बगल से
सावधानी से जाता।

सोचता हूँ कवि–मानव की संवेदना
मिलजुल कर चुप हो गई हैं।

सोचता हूँ उस पीढ़ी का
जिसकी बागडोर हम संभाले हुए हैं।

संवेदन शून्य होकर हम
उनको कहाँ लिए जा रहे हैं ?

हरिशंकर
प्रशिक्षण सहयोगी (हिन्दी)
के.वि.सं.
शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान, मैसूर

22
इक मुट्ठी आसमां

इक दिन इक नन्हा सा ख्वाब,
अण्डे से चटक बाहर आया।
नन्हीं सी गर्दन ऊँची कर,
अधखुली आँखों से ताकता, तारों जड़े आसमां को
छोटी सी चोंच खोल
जोर से चहका; खुश होकर,
छूना है सितारों को
बंद करना है, एक मुट्ठी आसमां
इन नन्हीं हथेलियों में
आसमां गरजा
जानता है? मैं कितना ऊँचा, बड़ा हूँ
तेरा नन्हा सा वजूद
कितना बेमानी है, मेरे सामने
कितना बौना है तू, मेरे आगे।
डरा नहीं, न ही सहमा;
वह नन्हा सा ख्वाब
चहक कर बोला
तू मेरे इन नन्हें पंखों की उड़ान को
आंक मत कम जरा भी;
मेरे भीतर पल रहे आत्मविश्वास को देख
जिसकी ऊंचाई को नापने

तुझ से सात आसमां भी पड़ जाएंगे बौने
मत भूल,
रख याद;
एक वामन के तीन डगों से
नापा जा चुका है समस्त ब्रह्मांड।
अभी तो मैंने देखा है; तुझे बस अधखुली आँखों से
कहीं ऐसा न हो, मेरे जगत ही
तू पड़ जाए, इतना बौना
कि तेरे सर पर पाँव रख
मैं स्वयं ही न बन जाऊँ
तुझ से बड़ा इक आसमां।
इसलिए न छेड़, न जगा;
मेरा आत्मविश्वास–
बस छूने भर दे, तारों को फलक के
और कर लेने दे बंद
इन नन्हीं हथेलियों में
इक मुट्ठी आसमां–

ऊषा नरूला
स्नातकोत्तर अध्यापिका (हिंदी)
के.वि. पलवल
हरियाणा

23

वन हाइकू

जंगल,
सूर्योदय के बाद भी,
प्रकाश का कोई पता नहीं।।

पक्षियों की गायन,
जागरूक हुआ,
मेरी अवधारणायों का मौजूदा।।

बारिश,
हर एक छोटी बूँद,
प्रकृति की राग।।

जीवन,
भोजन की कोई कमी नहीं,
केवल शिकारी का डर।।

मगरमच्छ,
अपने जबड़े खोला,
नदी के मन में अशांति।।

शेर,
एक लंबा साँस लिया,
खरगोश के दिल में आशंका।।

मधुमक्खी,
जो छत्ता को परेशान करता,
उससे ही शत्रुता।।

अँधेरी रात,
लोमड़ियों की चीख,
खतरों का गड्ढा।।

बंदर,
इधर उधर कूद रहा है,
अपने पेड़ को पहचान न पाया।।

एलगुरी रामनारायण
टी.जी.टी. (गणित)
के.वि. रामगुंडम

24
पहचान का सौदा

जीवित था मै खड़ा उपस्थित सामने,
इंकार किया पहचानने से, उसने,
कि मैं, मैं ही हूँ उसके सामने,
बूढ़ा, असहाय, रोग से पीड़ित मजबूर।।

बोला, रिटायर हूँ चाहिए पेंशन जीने के लिए,
बिता दी उम्र सिर्फ देश–सेवा के लिए,
मिल जाए जो कुछ गुजर–बसर के लिए,
साहब! आप ही हैं मालिक हमारे लिए।।

कुर्सी पर बैठा अधिकारी,
पहचानता नहीं बाप को,
है कौन आप, मैं जानता नहीं,
पेपर है सामने, पर पहचानता नहीं।।

मैं ही हूँ बिलकुल सामने हूँ पर,
चाहिए क्या प्रमाण, जीवित होने का,
शरीफ हूँ कोई गलत इन्सान नहीं,
खाई कसम बार–बार अग्नि की।

जवाब दिया उपेक्षा से, जलाता मैं,
सिगरेट बीसों अग्नि को साक्षी मानकर,
लाओ अपने तहसीलदार से,
जीवित होने पर प्रमाण लिखाकर।।

हारकर किया मोल मैंने पेंशन पाने का,
सौ रुपया रेट बताया उसने पहचानने का,
साहब पहले आप लेते रुपये दस थे,
बोला, गुजरा जमाना, वे सस्ते दिन थे।।

चुप्पी थी बर्फ सी जो टूटी नहीं शब्दों से,
दिए जेब से रुपए मैंने, लिया बड़े झेंप से,
इच्छापूर्ण अपनत्व से, पूछा हाल बच्चों का,
झट दिया जवाब मैंने, कृपा है साहब आपकी।।

महसूस किया मैंने व्यक्ति जो,
एक जीवित दृष्टि को स्वीकार कर लेता है,
डिग नहीं सकता, मगर वह घूस लेने में,
टूटता नहीं वह, पराजित हो सकता है।।

होता यदि देश मुक्त भ्रष्टाचार से,
खुद की जिन्दगी भी कटती बड़े सुख से,
घूसखोरी छोड़ो, दिखाओ ईमानदारी,
देश में होगी बरक्कत भी भारी।।

जे. प्रसाद
सहायक आयुक्त
के.वि.संगठन,
अहमदाबाद संभाग

25
अंधी दौड़

भौतिकता की अंध दौड़ में
सिसक रहा सबका बचपन।
शैशव काल से प्रश्न लिए कोई
यूँ ही निकल गया बचपन।।

माँ की ममता, वात्सल्य पिता का
प्रेम स्नेह अनुजा व सखा का।
छोड़ बढ़े मृदुता वसुधा का
संस्कृति व सम्मान जहाँ का।।

स्नेह प्रेम अनुराग से वंचित
लौकिक लक्ष्य को अंक में सिंचित।
बढ़ चला पथिक निर्लेप भाव से।।

मानो जीवन का सत्य यहीं है
पथिक तेरा कर्तव्य यहीं है।
निज मोह त्याग कर बढ़ता चल
कृत्रिम पथ पर तू चलता चल।।

निज जन्म आज भी याद है मुझको
छा गई खुशी यह सुनकर सबको
कुल उद्धारक कुल प्रतिपालक
दीप्त करेगा घर वैभव को।।

पढ़ा हुआ जब बड़ा हुआ
कृत्रिम मूल्यों में गढ़ा हुआ।
परिपाटी निज की गर्हित कर
कुल चाहत धूमिल करता हुआ।।

पर क्या जीवन का हेतु यही है?
देव–मनुज का सेतु यही है?
हे भ्रमित जीव! इस भव सागर का
वैदिक अध्यारोप यही है।।

हे देव श्रेष्ठ हे देव ईश
कर दुर्गुणों का समूल नाश।
विकृत जनों के चिन्तनों का
वृष्टि कर, कर नष्ट आज।।

आशुतोष द्विवेदी
प्र.स्ना.शि. (संस्कृत)
के.वि. नं. 2, सतना, म.प्र.

26
अब और नहीं

जीवन में माना मुश्किल बड़ी है
हर मोड़ पर देखो दुविधा खड़ी है
इनसे थकना तुम्हें अब है नहीं
मत बोल मुसाफिर और नहीं अब और नहीं।

तिनके चुन–चुन वो चिड़िया चली
कोई इधर गिरा कोई उधर गिरा
फिर चुनकर बुनकर एक आशियाँ
चली बनाने एक और कहीं
मत बोल मुसाफिर और नहीं अब और नहीं।

चींटी लेकर एक दाना चली
गिरती पड़ती वो बढ़ चली
संजोकर छुपाकर वो अन्न वहां
चली लेने वो और कहीं
मत बोल मुसाफिर और नहीं अब और नहीं।

श्रमिक लेकर ईट गारा चला
कभी ईंट गिरी कभी खुद गिरा
उठाकर बनाकर इमारत एक भव्य
चला बनाने फिर और कहीं
मत बोल मुसाफिर और नहीं अब और नहीं।

बादल लेकर कुछ बूँद चला
हवा से वो कब कहाँ चला
बरसाकर बूँदें शीतलता देकर
चले प्यास बुझाने अब और कहीं
मत बोल मुसाफिर और नहीं अब और नहीं।

अपने को जलाकर वो दीया हँसा
हवा से तूफ़ान से बचाकर जला
चला रोशन करने वो और कहीं
कर एक घर को जगमगा अभी
मत बोल मुसाफिर और नहीं अब और नहीं।

शिक्षक लेकर कुछ किताब चला
कोमल कदमों को राह दिखा
भविष्य बना जीवन को सजा
चला भाग्य बनाने अब और कहीं
मत बोल मुसाफिर और नहीं अब और नहीं।

कामिनी सिंघल
पी.जी.टी. (सी.एस.)
के.वि. कौसानी, उत्तराखण्ड

27
हमारी संस्कृति

मदारी की पीछे
हुजूम लगाने वाले बच्चे
अब अधेड़ हो गए हैं
चिलचिलाती धूप में
घर वालों से छुपकर
अमराइयों में
टिकोले चुनने वाले
जोगनदार की आँखें बचाकर
आम पर ढेला मारने वाले हाथ
रगेदने पर
किलकार मारकर भागने वाले पैर
अब थक गए हैं
होली में हुड़दंग मचाने वाले बच्चे
अब सचेत फादर हैं
...

उनके बच्चे
छोटी उम्र में
बस्तों का भारी बोझ ढोकर
पस्त हैं
फिर भी,
अधिक अंक लाने में
प्लेसमेंट पाने में
व्यस्त हैं
इस ग्लोबल गांव में
बचपन की उम्र
घट रही है
हमारी संस्कृति
जंगल के पेड़ की तरह
रोज कट रही है!

कनुप्रिया
टी.जी.टी. (विज्ञान)
के.वि. नं. 2, खड़गपुर

28

अच्छा हुआ

हमको नहीं बुलाया, अच्छा हुआ,
उनको नहीं बताया, अच्छा हुआ।
दुनिया से जीत पाया, दमदार था,
अपनों से चोट खाई, कच्चा हुआ।
दस्तूर जिंदगी का, चलते रहो,
दस्तूर बंदगी का, कुछ न कहो।
दस्तूर दर्द जिगरी, सहते रहो,
दस्तूर हां हुजूरी, करते रहो।
दस्तूर जो बिगाड़ा, गच्चा हुआ।
अपनों से चोट खाई, कच्चा हुआ।
कितनी क़रीब मंजिल, पहुंचे नहीं,
इतनी अजीब दुनिया, देखे नहीं।
उनको नहीं ग़वारा, आगे रहें,
जीवन नहीं दुबारा, अब क्या कहें।
तन साठ लेकिन मन मेरा बच्चा हुआ।
अपनों से चोट खाई, कच्चा हुआ।
जितना इसे संभाला, गिरता गया,
जितना इसे बचाया, रिसता गया।
जितना इसे बनाया, ढहता गया,
जितना सहेज पाया, मिटता गया।
निर्मल जुबां से गाया, सच्चा हुआ,
अपनों से चोट खाई, कच्चा हुआ।

हेमंत कुमार निर्मल
प्राचार्य
के.वि. नं. 2, ए.एफ.एस. हलवारा पंजाब

29
नवगीत

तुम सहस्रो बाहुओं से
मुझ अकेले को खदेड़ो
दूर फेंको
पर नहीं मैं भागनेवाला
यहीं वापस मिलूँगा
और मेरा नव बसेरा
दिल तुम्हारा

निविड़ तम छाए
ज़मीं से आसमाँ तक
क्या नयापन ?
एक रवि की किरण
धीरज से बढ़ी है
भेद कर घन

ना अँधेरा नष्ट होता
ना किरण के कदम थकते
सृष्टि की यह प्रकृति है
फिर कौन सा भय
क्यों सहारा?

सहज मन
जब सर्जना की डोर धर
जल में उतरना
शांत होता
जड़ जमाए गरल शीतल हो
सुरभि की पाछ धरता
मंद होता

सृजन से विध्वंस को भी
स्नेह की थपकी मिली है
सहजता ही स्रोत सुख का
जिंदगी का शुभ किनारा।

डॉ. रामरक्षा मिश्र 'विमल'
स्नातकोत्तर शिक्षक (हिंदी)
के.वि. बैरकपुर (थलसेना)

30
डाली कट रही है

एक बहुत पुरानी कथा
हम सुनते हैं बार–बार
एक व्यक्ति बैठा पेड़ पर
कर रहा था तीव्र प्रहार

काट रहा था उसी डाल को
जिस पर वह बैठा था
हम सोचते हैं बार–बार
कि वो भी मानव कैसा था ?

वह तो गिरा नहीं पेड़ से
जीवन उसका बच गया
इतिहास के अमर पृष्ठों में
नाम अंकित उसका हो गया

कितना समय बीत गया
कितनी पीढियां निकल गई
मैं सोचता हूँ क्या
परिस्थितियाँ कुछ बदल गईं

नहीं, आज भी उस दिन की भाँति
वही कुल्हाड़ी चल रही है
प्रकृति के सभी स्रोतों से
रक्तधारा निकल रही है
उन्नति के नाम पर हम
अवनति की ओर चले
नाना संकेतों को पाकर भी
न हम संभले, न ही बदले

काट रहे उसी डाल को
जिस पर हम बैठे हैं
और सोचते भी नहीं किंचित
कि हम भी मानव कैसे हैं

डॉ. मुकेश कुमार
टीजीटी (संस्कृत)
के.वि. रिकोंगपिओ

31
सृजन

मैं प्रकृति, मुझको बचाओ,
व्यथित हूँ, मुझको हँसाओ।
मैं 'सृजन' की हूँ कहानी,
जीव–जननी की रवानी,
पर दुःखी हूँ आज मैं क्यों?
आँसुओं से नम हुई क्यों?....
सृष्टि की अनुपम कड़ी को
और अब यूँ मत सताओ।
मैं प्रकृति, मुझको बचाओ,
व्यथित हूं, मुझको हँसाओ।
स्नेह से पाला–संवारा,
तुम गिरे मैंने संभाला,
मैं रही भूखी मगर
तुमको दिया हरदम निवाला।
मैं घनी छाया तुम्हारी,
तुम मुझे अब मत उजाड़ो।
मैं प्रकृति, मुझको बचाओ,
व्यथित हूँ, मुझको हँसाओ।
मैं खपी, तुमको बढ़ाया,
मैं गिरी, तुमको उठाया।
गोद भरी लोरी सुनाई,
मैं जगी, तुमको सुलाया।
थक गई बलिदान देते
अब नहीं मुझको सताओ।
मैं प्रकृति मुझको बचाओ,
व्यथित हूँ, मुझको हँसाओ।
कौन देगा जन्म तुमको,
कौन आँचल में भरेगा?
कौन पालेगा लहू से,
कौन संवर्धन करेगा?
मैं, माँ, बहन, बेटी तुम्हारी,
फ़र्ज़ अपना मत भुलाओ।
मैं प्रकृति मुझको बचाओ
व्यथित हूँ, मुझको हँसाओ।
क्यों नहीं सोचा कभी यह!
मुझे मानव ही डसेगा,
मान–मर्यादा कुचलकर
शर्म से मुझको भरेगा।
अब बनो तुम प्रकृति–मानव,
सृष्टि के सपने सजाओ।
मैं प्रकृति, मुझको बचाओ,
व्यथित हूँ, मुझको हँसाओ।

डी. डी. श्रीवास्तव
पी.जी.टी. (हिन्दी)
के.वि. सी.आर.पी.एफ. हैदराबाद

32

भारत महान

जिसकी माटी के कण–कण में,
भीनी सौरभ चन्दन समान,
लहराए धरती का अंचल,
कल कंठ कोकिला मधुर तान।
भारत महान भारत महान।।

उत्तुंग शिखर धर छत्र सुघर,
कल–कल करते झरते निर्झर,
हिमगिरी की गहन गुफाओं में,
मुनिवृन्द खोजते जगत–त्राण।
भारत महान भारत महान।।

गंगा यमुना की धवल धार,
शोभायमान बन कण्ठहार,
सींचती धरा का अन्तःस्थल,
देतीं जन–जन को प्राणदान।
भारत महान भारत महान।।

यह राम, कृष्ण की जन्मभूमि,
गौतम, गाँधी की तपोभूमि,
आज़ाद, भगत, बिस्मिल, सुभाष
के, पवन सुनाये विरद गान।
भारत महान भारत महान।।

कवि वाल्मीकि, तुलसी कबीर,
मीरा, नानक, रसखान, मीर,
गुरूग्रन्थ, वेद, गीता, कुरान,
जन–मानस में गुंजायमान।
भारत महान भारत महान।।

आनन्द कुमार त्रिपाठी
स्नातकोत्तर शिक्षक (हिंदी)
के.वि. आयुध निर्माणी, नालन्दा

33
सदभाव और संवेदना

मन मेरा करता कि बंधन तोड़कर संकीर्णता का
भाव–सरिता बह चले निर्बंध और निःसीम बनकर।
पोछ डाले बेबसों की आँख के सब आंसुओं को
दे नया जीवन उन्हें सुख–शांति का मधुमास बनकर।

बढ़ रही भूख उनकी, भर चुके हैं पेट जिनके,
छीनकर सबके हितों को वे ही अपना कोश भरते।
नीर आँखों के नहीं रुक पाते हैं पीड़ित जनों के,
चोट मिल जाती नई फिर, और वे लाचार बनते।

सिर्फ नारा खोखला है, देश के उत्थान का तब,
कर्म जिसमें है नहीं कुछ, त्याग और बलिदान का जब।
सब्र अब तो टूटता है, लाचार और शोषित जनों का
वेदना उनकी बनेगी, हथियार नवयुग के सृजन का।

क्रांति फिर से हो सके, आजादी फिर से चाहिए,
शक्ति शोषित का बने, फिर गांधी ऐसा चाहिए।
मन मेरा करता कि पी लूँ, गरल सब संसार भर का,
दूँ मगर अमृत उन्हें, सद्भाव और संवेदना का।

डॉ. हृदय नारायण उपाध्याय
स्नातकोत्तर शिक्षक (हिंदी)
के.वि. आयुध निर्माणी–भुसावल

34
अनमोल जिंदगी

बड़ी अनमोल है ये जिंदगी, कैसे बिताएँ हम।
करें रब की इबादत या खुदी में डूब जाएँ हम।।
भूल जाते हैं खुशी में,
पल इबादत के।
ढूँढते फिरते हैं हम,
कोने सजावट के।
हाथ कुछ लगता नहीं लम्हों की खुशियों से,
बेखुदी की नींद से खुद को जगाएँ हम।।
ख्वाहिशें अपनी लिए,
चलते अकेले जा रहे।
हर पराये दर्द से,
बच कर निकलते जा रहे।
कल जरूरत दूसरों की भी हमें होगी,
आज से ही दूसरों के काम आएँ हम।।
कौन उनको याद करता,
जो जिए खुद के लिए।
सुर्खरू वो हो गए
जो और की खातिर जिए।
वक़्त हर इक साँस की, तासीर देखेगा,
चन्द साँसें बन्दगी में भी लगाएँ हम।।
हमारा इक निवाला भी,
किसी की जुस्तजू होगा।
कोई कपड़ा पुराना भी,
किसी की आबरू होगा।

हमारा एक पल देकर, किसी का दिन बनाएँ हम।
करें कोशिश जरा सी तो, धरा को जगमगाएं हम।
किसी मखलूक की खिदमत,
खुदा की ही इबादत है।
किसी के काम आ जाना,
यही रब से मुहब्बत है।
मेरे आमाल ही जन्नत में मुझको ले के जायेंगे
घड़ी है इम्तिहाँ की तो, उसी की राह जाएँ हम।
ये हिन्दू है, ये मुस्लिम है,
ये सिख है, ये है ईसाई।
सभी भारत के बेटे हैं,
समझ ये क्यों नहीं आई।
शिकवे भुला दें और गले सब को लगायें हम
रखें हम एकता दिल से, नये दीपक जलायें हम।
तसल्ली दें किसी को हम,
किसी का दर्द कम कर दें।
मिटा दें नफरतें दिल से,
किसी पर कुछ करम कर दें।
मिलेंगी अनगिनत खुशियाँ, अगर लेंगे दुआएँ हम।
मिली थोड़ी सी हैं, थोड़ी सी खुशियाँ ढूँढ़ लायें हम
बड़ी अनमोल है.....
करें रब की .....

कहकशाँ
टी.जी.टी. (कला)
के.वि. नं. 2, बी.ई.जी. एण्ड सेंटर,
रूड़की

35
मैं सिर्फ मैं

समाचार पत्र पत्रिका
झटपट बदलता
विज्ञापनों के बोझ से लदे
न्यूज चैनल,
भावहीन, संवेदनाहीन युक्त
चिल्ला–चिल्ला के
झूठे भाव दिखाते
भावनाओं को भड़काते,
वो,
घुटनों में चेहरा छुपाए बैठी,
उसकी पीठ पर लटकी चोटी को
दिखा–दिखाकर,
मसालेदार वीभत्स प्रस्तुतिकरण,
ठेठ निठल्ले कर्कश स्वर में,
रोंगटे खड़े कर देते हैं
सोचने को,
क्या यह सामाजिक पतन का
चरम है?
या यह सामाजिक पतन का उद्घोष?
जिसमें बलात्कारियों, अपराधियों के
सामाजिक जीवन का सजीव चित्रण,
पीड़ित के काल्पनिक नाम,

और सड़क पर उमड़ी भीड़,
को देखकर मैं सहमी,
और मुझे देखकर, सहमी मेरी बेटी,
वो बहुत कुछ जानना चाहती है,
वो प्रश्न नहीं गढ़ पा रही है,
लेकिन पतन की तपन को
मेरे साथ महसूस कर रही है,
उसका सहमा–सहमा सा चेहरा,
मेरे रोंगटे खड़े कर देता है,
सुनसान घर में भी
अब तो किसी के, पदचाप सुनाई देते हैं
या फिर चीखते पुकारते
कहानी गढ़ते, भोथरी आवाज के रिपोर्टर
चैनल पर चैनल नजर आते हैं!
और रक्त रंजित समाचार पत्र पत्रिकाएँ!
मजबूर करते हैं मुझे
कहने को ये शब्द, मेरी बेटी को!
''अपना ध्यान रखना!
शाम को जल्दी आना!
घर से बाहर मत निकलना!
और हाँ, बस में यात्रा मत करना?
वो मुझसे अभी या फिर कभी
कुछ प्रश्न जरूर पूछेगी?
मुझ पर ही बंदिश क्यों?
मुझ पर ही ज्ञान क्यों?
मुझ पर ही बेड़ियाँ क्यों?

मैं क्यों? वही कपड़े पहनूँ?
जो तुम्हें या उन्हें पसंद हों
मैं कैसे चलूँ? कैसे उठूँ बैठूँ!
क्या सब कुछ तुम ही सिखा दोगे?
और हाँ!
जिस दिन मेरा पतन, घर या बाहर में होगा!
या हो रहा होगा!
उस दिन कोई नहीं आएगा
और हाँ!
और हाँ आएगा भी तो!
सब कुछ होने के बाद
भीड़ में समाचार पत्रों में
विज्ञापन से भरे चैनलों में
कुछ बुद्धिजीवी, राजनीति करते हुए
सिर्फ एक ही विषय पर
चीखते चिल्लाते, राजनीति करते हुए
सिर्फ एक ही विषय पर
चीखते चिल्लाते, झल्लाते
सिर्फ बनाते जा रहें होंगे
एक विषय और वो विषय
मैं, सिर्फ मैं।

किशोर कुमार
प्राचार्य
के.वि. नं. 2 खड़गपुर

36
पतंग होना चाहता हूँ

मैं जब कभी देखता हूँ अहं में भरी,
गगनचुम्बी इमारतों के वजूद को,
तो सहज ही डूबने लगता हूँ,
बौद्धिक भावातिरेक के सागर में,
जो मुझे उद्वेलित करती है मगर आंदोलित नहीं।
सच होना चाहता हूँ,
होना ही तो चाहता हूँ,
मगर कंकरीट की बेजुबान इबारत नहीं,
मैं तो केवल लहराती, आनंद में इठलाती,
वर्तमान को ललकारती,
वह पतंग होना चाहता हूँ,
जो अपने नश्वर, अति नश्वर अस्तित्व की परवाह किए बिना,
छू लेना चाहती है गगन की ठुड्डी,
आखिर पतंग होना ही तो जीवन है
जो एक बार ही सही पूरे वेग से उठती है आसमान की ओर,
लेकिन शांत और अनंत ज्ञान की शालीनता को लिए,
झुकना नहीं भूलती सदा धरातल की ओर,
सच पतंग और जीवन का आखिरी किरदार,
होता तो एक सा ही है।

कुमार विनायक
प्राथमिक अध्यापक
के.वि. मॉस्को

37
निर्भीक हो आगे बढ़ो

चुनौतियाँ तो आएंगी,
तुझे सदा सताएंगी
इनसे न तू डर कभी
आ जाएँ जो नजर कभी।

परखती ये इंसान को
संवारती जहान को
विधि का यही विधान है
समस्या है तो समाधान है।

डर के जो पीछे हट गया,
पराजय के ही निकट गया
विकट राहों पे चल के भी
संकल्प से तू न डिग कभी।

दुःख हो तो कभी गम न कर
आँखें कभी तू नम न कर
गमों के दौर को भी तू
मुस्कुरा के पार कर।

असफल वही जो रुक गया
समक्ष परिस्थिति के झुक गया
स्व प्रेरणा से भर सदा
सूरज सा तू निखर सदा।

बड़ों का तू सम्मान कर
मूल्यों को अंगीकार कर
लक्ष्य से कभी न तुम डिगो
निर्भीक हो आगे बढ़ो।

लिली सिंह
प्राथमिक शिक्षक
पश्चिम विहार, नई दिल्ली

38

मेरे महबूब वतन

मेरी आंखो का उजाला मेरा अनमोल रत्न
मेरा महबूब वतन
यहाँ टैगोर के नगमे, यहाँ मीरा के भजन
मेरा महबूब वतन।।

ये मेरे देश की माटी है जो सोना उगले
भोले मासूम किसानों की ये झोली भर दे
यहाँ हिलकोरियाँ ले–ले के बहे गंगे–जमुन
मेरा महबूब वतन।।

शाहजहाँ ने इसे उज्फत की निशानी दी है
भगत सिंह ने इसे अपनी जवानी दी है
इसके आँगन में फिरे खेलते गोपाल किशन
मेरा महबूब वतन।।

यहाँ अठखेलियाँ करती हुई पुरवाई चले
यहाँ झरनों के हर अंदाज़ पे शहनाई बजे
यहाँ अंगड़ाइयाँ लेती हुई आती है पवन
मेरा महबूब वतन।।

यहाँ कश्मीर की घाटी, यहाँ पंजाब के गाँव
यहाँ बंगाल की महकी हुई ज़ुल्फों की छाँव
यहाँ रंगीन लिबासों में गुलाबों से बदन
मेरा महबूब वतन।।

मो. शारिक
स्नातकोत्तर शिक्षक (भौतिक शास्त्र)
के.वि. नं. 3, झाँसी, उत्तर प्रदेश

39

हाँ मैं शिक्षक हूँ

हाँ
मैं शिक्षक हूँ,
मेरे पाठ से
कण्ठ की तरी झरती है।
जिससे बनते हैं,
सपनों के सुनहरे बादल।
आसमान में उड़ान भरते बादल
शिवाजी, कलाम, चंद्र शेखर का
रूपधर ये बादल।
तपती धरा पर
स्नेह बरसाते
कड़ी धूप में
किसी की छांह बनते बादल।
कांपते हाथों की
बांह बनते, बादल।
हृदय में झुलसाने वाली
बिजलियाँ बसाए हैं, लेकिन
अभिशप्त ही हैं;
आशीर्वाद हैं बादल।
मेरे पाठ से
मेरे शिष्य
ही हो जाते हैं
रूप बदल कर बादल।

मनीष कुमार त्रिपाठी
स्नातकोत्तर शिक्षक (हिंदी)
के.वि. सेक्टर 22, रोहिणी

40
नदी की नियति

पतझड़ में भी कुसुमित हूँ मैं
कोयल की कूक पपीहे की हूक हूँ मैं,
तुम सागर, मैं लहराती सरिता हूँ
कभी द्रुत तो कभी मंद गति से बही हूँ मैं,
कभी पाषाणों ने रोका मुझे
कभी किनारों ने टोका मुझे।
कभी समतल राहों ने साथ दिया
तो कभी ऊँचाई से नीचे को
अति वेग से गिरी हूँ मैं,
कभी द्रुत तो कभी मंद गति से बही हूँ मैं,
नीचे झरना रीता था
मुझे भी कल–कल करना था।
दोनों बाँहें खोल खड़ा था,
अब तो मैं और मेरा झरना
जाने कहां खो गई हूँ मैं,
कभी द्रुत तो कभी मंद गति से बही हूँ मैं,
मेरी नियति को मैं समझ न पाई
बहना रूकना, गिरना–थमना
कल–कल करना, रुके तो होगी राम दुहाई
अविरल चलते रहने का, संदेशा दे चुकी हूँ मैं,
कभी द्रुत तो कभी मंद गति से बही हूँ मैं।

ममता शर्मा
संगीत शिक्षिका
के.वि. नं. 2, इन्दौर, म.प्र.

41
बालक है या बेलदार

यारों बदसूरत है ये ज़माना,
जिसने मासूम के बचपन को ना पहचाना।
दे दी उसे छोटू कहलाने की सज़ा,
छीन लिया उससे खेल खिलौनों का मज़ा।

नन्हें से कंधों पर है पहाड़ जैसा भार,
घर में बाप है शराबी और खटिया पर माँ बीमार।
वो नन्हा बच्चा सड़कों पर नट का खेल दिखाता,
या फिर गर्मी में ठंडे पानी से लोगों की प्यास बुझाता।

जब ना मिला कोई काम,
तो चोरी का दामन लिया थाम,
पकड़ा गया तो काम तमाम,
वरना कल फिर वो ही सुबह और शाम।

जब चोरी की तो किसी ने कहा,
बेचारे का पेट है खाली।
तो किसी ने कहा सुधरेगा नहीं ये,
इसे दो–चार और दो गाली।

सरकार ने तो तय की,
बाल मजदूरी की उम्र चौदह साल।
पर उस बालक का शोषण
हर कदम पर हो रहा बेमिसाल।

जहाँ नज़रें उठाओ वहाँ,
बस दिखे सब बाल मजदूर।
दुर्गन्ध भरे ढेर में,
कूड़ा बीनने को भी हैं वो मजबूर।

यारों समझो कि शिक्षा ही है इसका एकमात्र उपाय,
जो दुनिया के हर इंसान को बनाए असहाय से भी सहाय।

अगर करना है उस मासूम के भविष्य में उजाला,
तो एक दीपक नहीं, जलानी होगी पूरी दीपों की एक माला।

मीनाक्षी
प्राथमिक अध्यापिका
के.वि. एयर फोर्स स्टेशन,
बवाना, दिल्ली

42

हर कोई मगरूर दौलत के नशे में चूर है

हर कोई मगरूर दौलत के नशे में चूर है,
आदमीयत और तहज़ीब–ओ–अदब से दूर है।

इस कदर लड़ते रहे हम मज़हबों के नाम पर,
ईद होली और दीवाली हर कोई बेनूर है।

आज हर कोई परेशां है यहाँ आतंक से,
घाव छोटा था जो कल तक बन गया नासूर है।

साध लेता है जो मतलब दूसरों को साधकर,
दौर–ए–हाज़िर में वही क़ाबिल वही मशहूर है।

टूट कर बिखरा नहीं जो दौर–ए–मुश्किल में कभी,
इस ज़माने में वही इंसान 'माही' तूर है।

(तूर – बलशाली)

महेश कुमार कुलदीप 'माही'
स्नातकोत्तर शिक्षक (हिंदी)
के.वि. नं. 3, ओ.एन.जी.सी., सूरत

43
वर्षा-कुमारी

नभ–गर्भ ही जिसका निवास,
जिसकी थी जन–जन को आस।
जन्म ली है वर्षा–कुमारी–
कृषकों की महत उपकारी।
रूप श्यामल, दन्त उज्ज्वल,
औ पूर्ण तन–चमक झलमल।
अवनि–आँगन पर आने को तत्पर,
तन पर विविध डाली है अम्बर।
घन में तड़ित चमक नहीं, है वर्षा–कुमारी की हँसी,
ठसकी मुस्कान के समक्ष, लुप्त हो जाते रवि, तारा, शशि।
कभी सत्वर, कभी मंथर गति से आने को उद्यत,
समीर संग औ संग लेती नखत।
इसकी ही गर्जन से पुकार उठते मयूर,
पग–पैंजनी में व्याप्त रच रेवा दादुर।
अन्य वन्य जंतुओं की ध्वनि वीणा के वादन,
और भाव बन जाते हैं कवि के गान।
गिर रहे हैं धरती पर झरने–से केवल श्वेत कण,
जीर्ण–शीर्ण टहनियों के कर देते हैं हरे पर्ण।
हर्षित कृषक स्वक्षेत्र को यंत्र से खोदते,
यदि अदृश्य काया न रहती तो उसे अवश्य पकड़ते।

डॉ. ओम प्रकाश पाण्डेय
पी.जी.टी. (हिंदी)
के.वि. आयुध निर्माणी, देहू रोड पुणे

44

हवा

ग्रीष्म रात का ब्रह्म मूहर्त
फुनगी पर बैठी हवा
भौरें से बतिया रही थी
भौंरा गा रहा था राग भैरवी
हवा नाच रही थी
अचानक उसकी सहेली आयी
हवा का हाथ पकड़ उड़ा ले गई
फुनगी हिलने लगी धीरे–धीरे
जाओ प्यारी,
बहुत याद आओगी
हो सके तो फिर आना
इंतज़ार करूंगी।

अंजू बाला लखेड़ा
स्नातकोत्तर शिक्षिका (अंग्रेजी)
के.वि. सैक्टर–4
आर. के. पुरम., नई दिल्ली

45
'सच' जालसाज क्यों है?

जिधर देखो तम का साम्राज्य क्यों है?
राह जिंदगी की काँटों का ताज क्यों है?

काटकर जंगलात, परेशान हो रहे हो
मौसम ज़रा बता दे, बदला मिजाज़ क्यों है?

नज़रो में बेशर्मी, हर दिल में झूठ बैठा
नक्कालों के शहर में, ''सच'' जालसाज़ क्यों है?

भीख न दिया और, झोली भी फाड़ दी
तेरी लाठी मेरे मालिक, बेआवाज़ क्यों है?

ये मौत का तमाशा, मातम कहीं ज़नाज़ा
वेश में आदमी के, दहशतगर्द बाज़ क्यों है?

अनजान हिन्दू–सिक्ख से, बन्दूक की गोली
धर्म के नाम लड़ने का, उजबक रिवाज़ क्यों है?

आर एन वर्मा
स्नातकोत्तर शिक्षक (जीव विज्ञान)
के.वि. मुरैना, मध्य प्रदेश

46
विडम्बना

जीवन है अनबूझ पहेली
दुखों के अम्बार बीच
एक छोटा–सा
सुख का लम्हा
करता है पथ उर्ध्वगामी।
है नृत्य उस अंश का
पर हम भूले–बिसरे
परिश्रान्त बैठे हैं–
नहीं कहीं है पथ आगे
एक निशीथ छाया है।
देवालय में, अंतः करण में
नहीं कहीं है शांति।
चौखट पर रखता हूँ पैर
अशक्त एवं पीड़ित का दर्शन
कराता है
अपनी सत्ता का आभास।
लौटता हूँ पुनः
मन की अंधी खोह में
पूछता हूँ, पूछता हूँ
कौन है, कौन है
एक नन्हा सा जवाब
देखते रहो, घुटते रहो।
झूठी संवेदना के
नयन नीर पर
सभ्यता की जमात में,
यही है विडम्बना।
बोलो मत, रुको मत–
चलते चलो, चलते चलो।
विकास की राह पर
ईमानदारी के उसूलों पर
कृत्रिम आँखें मिलाते रहो
यही है–
अधुनातन मानवीयता
यही है कविता का दर्द।
बार–बार लौटकर
अन्दर झाँकता हूँ
बाहर उचकता हूँ
पर एक ही–
आवाज है
एक ही जवाब है–
सभ्यता की दहलीज पर
व्यस्तता का नारा देकर
बढ़ते चलो, बढ़ते चलो।

डॉ. आर. सी. शर्मा
पी.जी.टी. (हिन्दी)
के.वि. एन.के.जे, कटनी, म.प्र.

47
मुझे न मिला कर्ज

मैं दौड़ा भागा तुरत–फुरत,
बिन पहने पाँवो में पनही,
ग्राम सेवक जी आए।
देखा ! झुण्ड चौपाल बीच,
जैसे गिद्ध ढोर को घेरे,
अपनी ही टाँग अड़ाते हैं।
जाय पास पैलगी कीन,
तबहूँन उन ध्यान दीन,
कर जोड़ खड़ा।
साहिब कै नजरि उठि।
खड़ा–खड़ा खो गया–
दुख–क्लेश सभी मिट जाएँगे,
सुख का जीवन पाएँगे।
कौन यह?
'चौंक उठा'
साहेब हमहूँ का चही कर्ज
कर्ज नहीं !
भइंसी, बकरी, बैल –
घोड़ा के खातिर
छाप अँगूठा की दे।
हवा संग ज्यों पत्ता
चला कर्ज पत्र संग।
अफसर से मंत्री तक,
विधायक से मंत्री तक,
निर्धन से धनी तक,
परसों तक फिराया, थकाया, छकाया
खटमलों से खूब चुसाया।
बचा कंकाल ही जब मेरा,
दूर मुझको सभी ने धकेला,
पा अवसर जमीर ने झकझोरा।
बना क्यों पखेरू पंख बिन,
शिकारियों बीच शिकार बन,
खुद फंसा जाल में
हँसिया गुड़ भरा फंसा मुँह में।

राज कुमार भारती
प्राचार्य
के.वि. आई आई एम, लखनऊ

48
छद्मदूत

चाक चौबंद हैं ऊँचे घराने
खात्मे के लिए
अस्त्रों की होड़।
करते
बैठकें जी तोड़।।
हथियारों को खतरा बताते गला
फाड़ के
शुरूआत करने से, पल्ला झाड़ के
मनुष्य जाति मटियामेट हो
जाएगी
खो जाएगी
खाक होके
कोई इसे रोके

''मेरे अस्त्र शांति के लिए
तुम्हारे क्रांति के लिए
किसी और के किसी और की
भ्रांति के लिए''
सबका अपना रोना है

इस चुहुलबाजी से क्या होना है
जुबाँ पर आता है हिरोशिमा
नागासाकी
लेकिन असली बात अभी है बाकी
बर्बरता, खुंखारपना,
जाहिलता, राक्षसत्व,

नहीं है तकनीक के भरोसे।।
कोई अंदर की बात तो परोसे।।

बम से कम
तलवार थी
मुंडी कटती थी लाखों की
तलवार से बत्तर
पत्थर,
फोड़े जाते थे सिर
पत्थर के भ्रून
नाखून
फाड़ देते थे सीना

नाखून से पहले
और पहले
अंदर की पशुता
रूप धरा करती थी हिंसक!

आज वही हिंसा
लिपी–पुती तकनीकों से
क्रूर रूप धरे है नाना
लेकिन हमने माना
एटम का गट्ठा
नहीं करें इकट्ठा

तो
बला टल जाएगी।
हमारी अवहेलना हमें छल
जाएगी।
पता नहीं था
शायद पता नहीं है
अंदरूने में समायी वृत्तियों को
कुचलना होगा।
नाखून–पत्थर–तलवार–बम
खत्म करना
केवल
छलना होगा।।

उठो और तलाशो
प्राण वायु।
छटपटा रही है
दीर्घ आयु।।
जरूरत होगी तो निगल
जाओगे
सूरज को हनुमान सा
सिर्फ दिखावे के लिए पंख
जला बैठोगे
बनके जटायु।

रोहित चौरसिया
टी.जी.टी. (हिन्दी)
के.वि. एन.ए.डी., सुनाबेड़ा

49

सड़क

एक सड़क,
स्थिर है, जड़ है,
मूक है, निर्जीव है।
पर, विविधता में,
एकता का प्रतीक है।।

यह, पूरब से पश्चिम को,
उत्तर से दक्षिण को,
जोड़ती है।
भाषा–बोली, धर्म–कर्म,
ऊँच–नीच की दीवार को,
तोड़ती है।।
यह, काली है, कलूटी है,
कहीं ऊँची है, कहीं नीची है।
पर, मानव पर,
इसका बड़ा उपकार है।
साम्यवाद का यह,
एक ठोस आधार है।।
इसके ऊपर,
अमीर भी चलते हैं,
गरीब भी,
राम भी, रहीम भी।
चपरासी भी, अधिकारी भी,
मजदूर भी, व्यापारी भी।।
बूढ़े भी, बच्चे भी,
झूठे भी, सच्चे भी।
दानी भी, भिखारी भी,
पैदल भी, सवारी भी।।
सबका,
एक सड़क पर चलना,
कहीं मजबूरी तो नहीं?
साम्यवाद का प्रदर्शन
कहीं लाचारी तो नहीं?

अगर सामर्थ्य होती,
तो, संभवतः,
एक दूसरे के पास न आते।
सब, अपनी–अपनी,
सड़कें अलग बनाते।।

जैसे सबका,
अपना–अपना भगवान है।
किसी का गॉड,
किसी का खुदा,
किसी का शंकर, किसी का
राम है।।
कोई बुद्ध को मानता है,
कोई महावीर को।
कोई ईसा को पुकारता है,
कोई पीर को।।

क्या हम सड़क से,
कुछ सीख नहीं सकते?
जाति–धर्म, ऊँच–नीच,
से ऊपर उठकर,
मनुष्य को सिर्फ,
मनुष्य के रूप में,
देख नहीं सकते?

तेज पाल सिंह
प्राथमिक शिक्षक (प्रथम पाली)
के.वि., बस्ती, उ.प्र.

50
सफलता

करते हैं जो कर्म, ना जिनको फल की चिन्ता है
कल उन्हीं हाथों में होती निश्चित सफलता है।

है जिनके आदर्श बहुत ऊंचे, और ना भय आंखों में
होते जो ना अधीर, ना जिनके मन में विकलता है
भाग्य उन्हीं के हाथों में आकर के फलता है
कल उन्हीं हाथों में होती निश्चित सफलता है।।

क्या मुश्किल है अगर राह में कोई मुश्किल आए
और विघ्न बाधाओं से ये दिल हिल जाए
यहाँ परिश्रम की अग्नि में जो नित जलता है
कल उन्हीं हाथों में होती निश्चित सफलता है।।

संभव जैन 'निराला'
टी.जी.टी. (संस्कृत)
के.वि., खानापारा
गुवाहटी, असम

51
तुम नादान हो अभी

तुम नादान हो अभी
जानते नही ज़िंदगी की
गुस्ताखियां

रोते हो
तो पल भर में ढूँढ लाते हो
हँसी के टुकड़े
मैं तुम्हारी हँसी के वही टुकड़े
अपने बटुए में रखकर
रोज़ ले जाती हूँ अपने घर
और अपने घर की हवा में
घोल देतीं हूँ उन्हें

पर मैंने तुम्हारी हँसी के कुछ टुकड़े
संभालकर रख लिए हैं अपने
बटुए में

मुझे मालूम है कि आज
स्कूल से बेशक़ीमती दरवाज़े से
बाहर निकल जाओगे तुम

पर याद रखना
कि हर खुला दरवाज़ा
एक नई मंज़िल की तलाश है
इस रास्ते में बहुत से पत्थरों से
मुलाकात होगी तुम्हारी

उन पत्थरों से तुम टूटना पर
बिखरना नहीं
बिखरना तो समेट लेना ख़ुद को

और अगर ज़िंदगी हँसना भुला दे
तो पीछे मुड़कर देखना
मेरे बटुए में तुम्हारी हँसी के
वही टुकड़े
अभी सुरक्षित पड़े हैं
चाहो तो ले जाना उन्हें।

डॉ. ऋतु त्यागी
पी.जी.टी. (हिंदी)
के.वि. सिख लाईंस
मेरठ, उ.प्र.

52
सार्थक गीत कहाँ से लाऊँ

जीवन में उड़ती आवारा,
यादों के बिखरे पत्रों पर
टूटा फूटा लिख सकता हूँ
सार्थक गीत कहाँ से लाऊँ,
पर्वत से टकरा–टकरा कर,
शीतल शशि की स्वर्णिम काया,
मलिन हो रही आज जगत में,
देख ईश्वर तेरी माया,
धर्म बिक रहा गली–गली में,
मानव बिकता हाटों पर,
निर्मलता दम तोड़ रही,
गंगा के पावन घाटों पर,
पग–पग बिखरे–बिखरे व्यापारों में,
व्यापारों के संसारों में,
कम दामों में बिक सकता हूँ,
मैं मनमीत कहाँ से लाऊँ,
सार्थक गीत कहाँ से लाऊँ।

सतीश श्रीवास
पुस्तकालयाध्यक्ष
के.वि. पश्चिम विहार, दिल्ली

53
क्यों न तब तारे बनें हम

फैलती हो निशा काली
घूमते निशिचर शिकारी
हर डाल पर कौशिक[1] पुकारें
दुबकती हो सृष्टि सारी

हो भले जीवन क्षणिक, पर
क्यों न उल्का बन जलें हम ?
क्यों न तब तारे बनें हम ?

आकाश में पसरा हुआ घनघोर काजल
एक धब्बा चाँद पर भी है गिरा
क्या चमकना छोड़ देता वह दुखी हो
भले घटती रोज उसकी इक कला हो

भले सोता हो जगत, पर
क्यों न बन प्रहरी जगें हम ?
क्यों न तब तारे बनें हम ?

मानता हूँ, हर जगह है भ्रष्टनीति
पर नहीं क्या काम आता है
एक लघु दीपक निशा में
सूर्य का जब विरह होता ?

नहीं चिंता, भाड़ फूटे या न फूटे
घोष निज के फूटने का भी तो कोई काम नहीं है।
मार्ग पूरा न सही पर
दिशा तो दे ही सकेंगे
क्यों न तब तारें बनें हम

[1]उल्लू

शिखर चंद जैन
स्नातकोत्तर शिक्षक (हिन्दी)
के.वि. नं. 3, सागर
मध्य प्रदेश

54
जीवन

जीवन के दिन चार जवानी,
हर जीवन की नई कहानी।
लक्ष्य हीन लगता है जीवन,
जीवन से गर गई रवानी।।

अगर ध्येय कुछ बन न पाये,
साथ अधिक कोई चल न पाये।
श्रेष्ठ मार्ग की व्यर्थ खोज में,
व्यक्तिपरक जीवन बेइमानी।।

हमने गर कुछ आज न सोचा,
दृढ़ निश्चय कर मार्ग न खोजा।
क्षमताओं की कठिन कसौटी,
हृदय विदारक नहीं कहानी।।

रात घनी फिर बने सवेरा,
कहीं न कर तू अभी वसेरा।
लिख दे एक अनकही कहानी,
बन जा एक दरिया तूफानी।।

सूरज रोज उदय होता है,
शाम चाँद को दे सोता है।
तुझको किस्मत है अजमानी,
बुन दे एक सपना रूमानी।

सोने से क्या बन पायेगा,
नया सवेरा आ जाएगा।
दीप तुझे दिन रात जलानी,
बन जा एक दरिया तूफानी।।

सुमन शर्मा
पी.जी.टी. (रसायन शास्त्र)
के.वि. इफ्को, फूलपुर, इलाहाबाद, उ.प्र.

55
पहले लक्ष्य को सोचो

राह के हर मोड़ पर हूँ देखता
तेज गति से फैलती ही जा रही
स्याहवर्णी शाम।

जो अभी थे साफ चेहरे धुंध होते जा रहे
और शायद कुछ समय के बाद
उनकी न रहे पहचान
आती स्याहवर्णी शाम।

अँधेरी रात आएगी
चलेंगे राह में जो लोग; यूँ टक्कर मचाएँगे
भिड़ेंगे हर कदम फिर भी वहीं चक्कर लगाएँगे;
रुकना चाहता कोई नहीं
एक दूसरे की होड़ में
सब हैं बने गतिमान
आती स्याहवर्णी शाम।

राह की धूल से बचकर
निकल जाएँ अभी आगे
दूसरे जान न पाएँ
इसी अरमान से नकली मुखौटा बाँध रखे हैं;
जाते तेज गति से हैं मगर अज्ञात है गन्तव्य
चलते ही रहेंगे क्या? पहेली है बनी अनजान
आती स्याहवर्णी शाम।

अरे ओ राहियों। सोचो, जरा इस बात को सोचो
बढ़ना चाहते आगे तो पहले लक्ष्य को सोचो
रास्ता भूल न जाओ, हाथ में रोशनी ले लो।
अँधेरे के हृदय को चीरकर आगे पहुँच जाओ
भटकते राहियों को भी
चमक की एक झलक दे दो;
आ जाए नयी मुस्कान,
फिर क्या स्याहवर्णी शाम ?

डॉ. उमाशंकर मिश्र
प्र.स्ना.शि. (संस्कृत)
के.वि. गढ़ा, जबलपुर,
मध्य प्रदेश

56
नीर, नारी और विज्ञान

मैं नीर

सृष्टि का आदि तत्व,
आप्लावित मुझ से
धरती का ओर छोर
तन का पोर–पोर।
आहत किन्तु।
क्षीण, रूग्ण
ब्याधित, बाधित।
मेरा वह सुवासित
तरल, तन
हुआ विषैला, कसैला।
लोभी सब जन
करती रहती रुदन।
पीर पीर और पीर
मैं नीर।

मैं नारी

मैं कारक
मैं कारण
मैं माता,
दुहिता, भार्या, बहन
कांधे लादे
हूं तमाम वजन।
रखती प्रसन्न
मुस्काती, हर्षाती।
छुपाती
पर, हृदय का क्रन्दन।
झेलती तिरस्कार
व्यापार, बलात्कार।
पर न हारी
मैं नारी

मैं विज्ञान

शास्वत सम्मान
आदम का,

मैं मानव

मानता मैं
अपना कुकृत्य।
समझा मैंने
सबका मनतव्य,
नीर जहरीला,
नारी की पीड़ा
सबका हेतु
केवल लालच है।
संस्कृति और सौन्दर्य ही
जीवन का सच है।
विज्ञान प्रयोज्य है
ज्ञान योग्य है।
साधन को साध्य जाना
साध्य को साधन माना
इसी कारण मेरा पराभव
मैं मानव।

विजय कुमार अग्रहरि
'आलोक'
प्र.शि. (अंग्रेजी) द्वितीय पाली
के.वि. ए.एम.सी., लखनऊ

गिरा था जो
खोकर सुख
आसमानी।
आज
कर रहा राज
न कोई उसका सानी।
कर दिए दर्ज
कीर्ति तमाम।
दिलाया मनुज को
अभिसिप्त।
पर
मानव लोलुप
स्वकेन्द्रित।
समझा कहां मर्म
भूला भातृ धर्म।
संहार हेतु चुना मुझे।
तथापि
ऋणी हूं उसका।
दिलाया मुझे ये स्थान
मैं विज्ञान।

57
प्रकृति-पिया से नाता जोड़ो

शाम सुहानी कितनी सुन्दर,
सुबह सवेरा मन भावन,
हौले–हौले दिन का चढ़ना
जीवन का सुन्दर ये क्रम।

दिवस बीत गया संध्या आई
घुप्प अँधेरा मन डरता
पर ये तो होगा ही होगा
डर के भी मैं क्या करता!

काली रात डरावनी लगती
पर उसका भी है श्रृंगार
चाँद चांदनी टिम–टिम तारे
रात की रानी अनुपम भेंट!

दिन भर थका रहा जो प्राणी
शक्ति स्रोत देती रात उसे
तन मन स्फूर्ति मय होता
जीवन देती रात उसे!

अरुणोदय होता जीवन का
प्रसारित प्रकाश दिनकर का
ऊषा काल की मंद पवन से
पुलकित जीवन जन–जन का!

रक्तिम उन कलियों का हंसना
देता सबको शुभ संकेत
रात बीत के दिन होता ही
साथ तुम्हारे हैं अखिलेश!

कू–कू करके कोयल गाती
जीवन का सुख मन्त्र बताती
कहती जीवन गीत बना लो
प्रकृति को अपना मीत बना लो!

कृत्रिमता से मुख को मोड़ो
प्रकृति पिया से नाता जोड़ो
फिर तुम जी पाओगे सुख से
मुक्त रहेगा जीवन दुःख से!

डॉ विजय राम पाण्डेय
पी.जी.टी. (हिन्दी)
के.वि. अपर कैंप, देहरादून कैंट
उत्तराखण्ड

58
बेटी है तो सृष्टि है

काश! वह भ्रूण
अपने मन की बात बता सकती
इस दुनिया में जन्म लेने और जीने का हक
मुझे भी है
तो अंदर ही अंदर
हत्या नहीं होती उसकी।
जन्म लेने के बाद
वह भी इस सुंदर दुनिया में रहने की
अपने मन की इच्छा प्रकट करती तो
जन्म देते ही
लड़की होने के नाते
उसे मार डालने
और कूड़े में फेंक देने की
अनगिनत घटनाएँ
घटित नहीं होतीं समाज में कभी।
अरमान अपने हृदय में
और आँखों में सपने पाले
वह नन्हीं लड़की,
लड़कों की तरह पढ़ने और
बाहर जाने की अपनी इच्छा प्रकट करती तो
वंचित नहीं की जाती इस खुशी से।
और अपने छोटे भाई–बहनों की
या घर की देखभाल के लिए

घर में ही बंद रहने के
दंश से बच जाती वह भी।
वह अपने गरीब माता–पिता से
उनके साथ गरीबी में ही
जीने की इच्छा प्रकट करती तो
लाचार माता–पिताओं द्वारा पैसों की खातिर
नादान बच्चों को बेचने के
घोर अनर्थ से लड़कियां बच जातीं।
पशु–समान अपने चारों ओर घिरे
अधम नर–सिंहों से उसे यदि
यह बता पाने का अवसर मिलता कि
मैं भी तुम्हारी छोटी बहन समान हूँ,
तो 'निर्भया' होने से बच पाती।
कन्या के रूप में
काश ! वह अपने मन की बात
अपने मां–बाप से कह पाने का
साहस जुटा पाती
कि उनके द्वारा ढूँढा बूढ़ा वर
उसे पंसद नहीं है,
तो अकाल
ही उसे विधवा होना न पड़ता।
शादी के बाद यदि वह अपने अधिकारों के बारे में
जानती और
अपने पति और उनके घरवालों द्वारा किए जाने वाले
अन्यायों के विरुद्ध आवाज उठाती
तो जिंदा जल जाने से बच जाती।।

काश ! वह अपनी नई जन्मी लड़की को
पूरे लाड़–प्यार से पालने की
अपने मन की अदम्य इच्छा बता सकती,
तो जन्म दिए लड़की को अपने ही हाथों
हत्या करने या फेंक दिए जाने की
घटनाएँ न दुहराई जातीं
रोज–रोज।

काश !
अपने युवा, कमाऊ बेटों–भाइयों से
उनके साथ अपना
बाकी जीवन जीने की इच्छा वह प्रकट करती तो
बुढ़ापे में लाचार माँ–बहनों को
वृद्ध–सदनों में या
अनाथालयों में रहना न पड़ता
बेटी है तो घर है
बेटी है तो परिवार है,
समाज है,
राष्ट्र है,
सारी सृष्टि है
वरना
विध्वंस है, विनाश है।

सी. विजयकुमारी
स्नातकोत्तर शिक्षक (हिंदी)
के.वि. सी एल आर आई
चेन्नई, तमिलनाडु

59
अमर बनो

बादल की कोख से निकला
नन्हा सा इक स्वस्थ जल कण
सोचा रास्ते में उसने
कि मैं समुंदर में गिरूँ
मोती बनूँ धवल वर्ण की
धनी माला में सजाएँगे
पैसों से मूल्य बढ़ाएँगे।

तभी माँ बादल ने आवाज़ दी
बेटा स्वार्थी मत बनो
जा धरती की ओर
तेरा इंतज़ार है हजारों को
बुझाओ उनकी प्यास
बचाओ उनके प्राण
अपने लिए जो जीता है
समझो कि वह अकेला है
औरों के लिए जो मरता है
हज़ारों दिलों में बसता है
मर के भी वह अमर बनता है।

वाई. वी. रत्नम
प्राथमिक अध्यापक
के.वि. आई.एन.एस. कलिंग

60
अनवरत

अविरल अनवरत सदियों से
प्रवाह–स्वर्ग–धरा में
बंधन न बंधन
डोर–डोर अपनापन
मीरा का भजन
राधा की अंज गोपियों का रास
कण–कण जीवन में वास
तपस्वियों के तप
भक्तों के जप
यौवनों की तड़प
वृद्धों की अनुभूति
माँ–ममत्व
विज्ञान तत्व
राजसी दुर्ग–ताज़
कर्मियों काज़
कलरव–किलकारी
वनों–नाद
हिंद संस्कृति लाज़!

तोड़ती दीवारें नव संस्कृति सृजन
न संपदा न वर्ग
एक 'संज्ञा'!
न तोल–मोल
एक सभ्या!
न तल न वाह्याय
एक हास्या!
मनमस्तिष्क हृदयोंद्वार!
साथ–साथ
जन्मों जन्मों
गांठों के गांठ
सर्वदा प्रफुल्लित
न आह न नज़रें
किसी का! बस
विलय एक!
जीव–जीवन का।

टी. आर. चौहान
टी.जी.टी. (हिंदी)
के.वि. जांजगीर, रायपुर (छ.ग.)

61
अपनी व्यथा कहूँ मैं किससे?

अपनी व्यथा कहूँ मैं किससे?
किसे बनाऊँ हमराही?

कलम हाथ में पड़ी हुई है।
बची नहीं इस में स्याही।

लगा चुभोने नोक त्वचा में।
शोणित बहने लगा गरम।

खूं की बूंदों ने साथ दिया,
कविता को उसने दिया जनम।

कातर–मन टूटे सपनों सा,
खुद को ईश्वर पर छोड़ दिया।

आखिर, भीतर की तड़पन को,
अदृश्य तत्व से जोड़ दिया।

गुप्त कही कुछ भी ना रहे,
सर्वत्र सभी अब जान सके।

क्या सच है, और है झूठ कहाँ,
सब सच्चे मन से जान सके।

गुमराह पथिक मैं रहा सदा,
मंजिल को समझ नहीं पाया।

सपनों को अपना समझ लिया,
अब ढूंढ रहा अपना साया।

पता नहीं कब तक चलना,
है दूर अभी कितनी मंजिल।

कब मधुर मिलन होगा उनसे,
जो सत्य सनातन सुन्दर दिल।

है कठिन बहुत स्वयं से लड़ना,
स्वयं से लड़कर स्वयं को पाना।

हासिल क्या होता अंत समय,
संभव है क्या? बतला पाना।

मानव मन जब थक जाता है।
स्व–रहित स्वयं को पाता है।

सहसा स्वयं को सर्वेश्वर से,
जुड़ता वह खुद को पाता है।

राजेन्द्र झा राजन
प्रा. स्नातक शि. (गणित)
के. वि. फोर्ट विलियम
कोलकाता, प.बं.

62
कर्मयोगी

पुकारोगे अपने को तो, आत्मज्ञान मिल जायेगा,
करोगे उद्यम निरन्तर तो, लक्ष्य आसान हो जायेगा।

करोगे प्यार सबको तो, सम्मान मिल जायेगा,
त्यागोगे अपने अहम् को तो, तुम्हे इंसान मिल जायेगा।

छोड़ोगे राग–द्वेश तो, मित्र – मंडल मिल जायेगा,
खोजोगे ज्ञान नित तो, रहस्य उजागर हो जायेगा।

गाओगे सुमधुर भजन तो, वह संगीत बन जायेगा,
करोगे याद परमतत्व को तो, वह तीर्थ बन जायेगा।

चलोगे सत्य के पथ पर तो, वह मार्ग बन जायेगा,
रहोगे सदा सक्रिय कर्मयोगी तो, वह समय बन जायेगा।
और देखोगे सभी में ईश को तो, भगवान मिल जायेगा।

वीणा गुप्ता
पीजीटी (हिंदी)
के.वि., वायु सेना स्थल,
बागडोगरा

63
अतीत के आँसू

वो बुढ़िया नानी की बानी,
ओ पुरानी कहानी।
पुजारी बाबा के साथ,
अंगीठी जलवानी।
खपरैल से ढकी हुई,
कोठी की रवानी।
जहाँ गूँजती थी वो,
बचपन की किलकारी।
पर न जाने कहाँ खो गई,
वो गाँव और वो पुरानी कहानी।
मैं गया अपने गाँव और खोजता रहा,
शायद कहीं दिख जाती वो बचपन की खुशहाली।
वहीं पर थोड़ी तिरछी सी,
एक तरफ़ झुकी हुई वो मुझे देख रही थी।
दरारों से आँसू निकल रहे थे,
खपरैल थोड़े– टूटे, थोड़े हिले– डुले कुछ कह रहे थे।
अरे ! मैं वहीं हूँ,

जो कभी तुम्हें धूप, बरसात और आँधियों से बचाया करती थी।
आज हड्डियाँ बूढ़ी हो गई हैं,
मरहम पट्टी के लायक भी नहीं हैं।
देख क्या रहे हो उजाड़ डालो,
मरहम पट्टी की जगह इसे जला डालो।
शायद उसकी रोशनी से सवेरा हो जाए,
और मेरे दर्द का दिन भी पूरा हो जाए।
बस करो, आँसू संभाले नहीं जाते,
जैसे धड़कन रुक सी गई हो, मानो उसे चला ही नहीं पाते।
ऐसे ही तो देख रही थी,
वो पुरानी बखरी की अधमरी सी दीवाल।
मैं देख रहा था उसे और,
लोग एक–टक देख रहे थे मुझे।
मैं सोचता रहा इतने कम दिन में,
कैसे बदल जाता है सब कुछ।
वो बुढ़िया नानी की बानी,
ओ पुरानी कहानी।

डॉ. विनय कुमार सिंह गौतम
टी.जी.टी. (कला)
के.वि. नं.–3, ओ.एन.जी.सी., सूरत, गुजरात

64
जीवन फल

नवजात शिशु के आने पर,
बुनते अपने ताने–बाने,
सपनों में सतरंगी इन्द्रधनुष दिखते,
आशा क्षितिज सजते ही रहते,
मन आँगन, खुशियों से खिल उठते।।

जीवन के पल–पल को,
उठते–ढलते, चलते फिरते,
धूप–छाँव, सी सफ़र को।।
सुख–दुःख की मोतियों को,
स्नेह धागों में पिरोकर,
बनाता सुनहरी डगर जीवन को।।

जीवन में,
होता, सुख और दुःख का मेल,
दिखता, धूप और छाँव का खेल।
करता कपटी, हर पल फरियाद,
चखता स्वर्ग और नरक का स्वाद।।

मानव, यह मत अब भूलो,
भूलकर, जिंदगी से, न खेलो,

सिक्के के दो पहलू देखो
प्रकाश और अंधेरों का फर्क देखो,
जीवन और मृत्यु का चक्र देखो,
प्रभात और संध्या का वर्क देखो।
जीवन है,
ईश्वर का अनमोल उपहार,
बेवक्त न करो, इसे बेकार।

दुरुचरित्र, बुराइयों का करो संहार,
प्रतिदिन हो, बसंत ऋतु का संसार।

नियन्त्रण में हो, हर उन्माद,
मानव को दो, मानवता का संवाद।।
लाओ,
चरित्र नैतिकता और अच्छाईयाँ,
बनाओ इन्हें, मानव की परछाईयाँ।

तब,
मीठा हो जायेगा जीवन–फल,
जीवन, सचमुच हो जायेगा सफल।।

ब्रजेश कुमार
स्नातकोत्तर शिक्षक (जीव विज्ञान)
के. वि., अरुवनकाडु
नीलगिरी, तमिलनाडु

65
मुझसे संवाद करो

ओ निसर्ग के उपहारों! मुझसे संवाद करो
यह माना हम तुम अलग बहुत
मैं मानव तुम वनस्पति जगत
पर यह रिश्ता बड़ा अनोखा
मैं सखी तुम्हारे बचपन की
तुम मेरे मानस के परम सखा
ओ जूही की कलियों! मुझसे संवाद करो

लगता क्यों मुझको ऐसा है
हम तुममें सब संप्रेषणीय है
न स्वर–कंठ की आवश्यकता
न अक्षर–भाषा की बाधकता
ओ मधुमालती की लताओं! मुझसे संवाद करो

कोई सूक्ष्म तरंग–सी आती है
जो मुझे विह्वल कर जाती है
तेरी खुशबू में एक वक्तव्य छिपा
अतींद्रिय तिलिस्म का जाल बिछा
ओ हारसिंगार के फूलों! मुझसे संवाद करो

तेरी खामोशी कुछ कहती रहती
जहाँ मेरी इंद्रीय नहीं पहुँच सकती
बहुत बारीक हैं कुछ परदे पड़े
जिनके आर–पार हम दोनों खड़े
ओ चंपा की डालियों! मुझसे संवाद करो

हवा में तेरे पत्ते जब डोलते हैं
लगता कुछ भेद–सा खोलते हैं
कभी अस्पष्ट, धुंधला सा पाया
कभी लगता सबकुछ समझ लिया
ओ रातरानी की झाड़ियों! मुझसे संवाद करो

डालों पर जब कलियाँ लगतीं
हो शुभ्र, ताम्र कोई ललित
प्रकृति की सारी सुंदरता समेट
करता मन कितना हर्षित, पुलकित
ओ गुलाब की पंखुड़ियों! मुझसे संवाद करो

मैं करूँ जो कभी तेरा आलिंगन
इस स्पर्श में कितना अपनापन
तू मेरे भावों को समझ पाये
मैं सोचूँ कि तुम हो मेरे जाये
ओ मौलसिरी की तरुओं! मुझसे संवाद करो।

मानव अपनी वाक् क्षमता पर इठलाये
कितना कहे–सुने और विवाद उठाये
तू निर्वाक खड़ा एक हठयोगी–सा
बिन कहे ही सब कुछ कह जाये
ओ पीपल के वृक्षों! मुझसे संवाद करो
ओ निसर्ग के उपहारों मुझसे संवाद करो।

मुकुल कुमारी अमलतास
स्नातक प्रशिक्षित शिक्षिका
के.वि., वायुसेना नगर, नागपुर

66
वतन पे मेरे

वतन पे मेरे जिस दिन जरा भी आँच आएगी,
मेरे बदन की हर एक सांस वतन के काम आएगी।

आन से ज्यादा नहीं है कीमत इस जिस्मों जान की,
जब दुश्मन सर उठाएगा उसकी अर्थी वहीं उठ जाएगी।

इतना सस्ता नहीं है खून मेरे वतन के सिपाही का,
करोड़ों बहनों का भाई है जो पूत है लाखों माई का।

जिस दिन बदन पे सैनिक के जरा भी खरोंच आएगी,
जब दुश्मन सर उठाएगा उसकी अर्थी वहीं उठ जाएगी।

नहीं है सीखा हटना पीछे हम आगे बढ़ते ही जाते,
जब हमारी धरती पे किसी के नापाक कदम पड़ जाते।

उनको मार भगाने में खून की नदियां बहा दी जाएंगी,
जब दुश्मन सर उठाएगा उसकी अर्थी वहीं उठ जाएगी।

बारूद हमारा बिस्तर है, हम बमों पे सर रख कर सोते हैं,
आहट सी इतनी होती है हम झट उठकर खड़े होते हैं।

हर गोली बंदूक की दुश्मन के सीने तक जाएगी,
जब दुश्मन सर उठाएगा उसकी अर्थी वहीं उठ जाएगी।

आलोक जायसवाल 'प्रथम'
पुस्तकालयाध्यक्ष
के.वि., गिल नगर, चेन्नई

67
मैं ने कह दिया है बेटी को

मैंने कह दिया है बेटी को,
यह घर तुम्हारा है– सिर्फ तुम्हारा,
कभी भविष्य में, संकट हो आश्रय का,
या हो प्रश्न, स्व– अस्तित्व का,
मना करता हो कौर, गले से नीचे गुटकने में,
तो दौड़े आना– इस ओर,
बेझिझक, बिना सोचे,
मैंने कह दिया है बेटी को,
यह घर तुम्हारा है– सिर्फ तुम्हारा,
एक रस्म, तोड़ नहीं देती– खून का रिश्ता,
दस जन्मों तक, तो बिल्कुल भी नहीं,
कभी उठे कोई सवाल, तुम्हारी गरिमा पर,
बोझ इतना बढ़ जाये की, कदम डगमगाने को हों,
सांसें, एक नये रिश्ते को, करें मानने से इनकार,
लगे कि आज अंतिम है, ये क्षण, ये पल है, बस अंतिम,
तो दौड़े आना– इस ओर, बेझिझक, बिना सोचे,
मैंने कह दिया है बेटी को, यह घर तुम्हारा है– सिर्फ तुम्हारा।
मैं– हूँ,
हाँ– हूँ,
हो सकता है, कभी रहा हो कोई अलगाव,
या कोई चोट, मेरे पुरुषत्व पर,
पर क्या तार– तार हो सकता है,
हमारा डी.एन.ए.,
सुईयों के चुभने या चुभोने से,

दिल के तार कभी टूटे हैं कभी?
चाहे कैसा भी सैलाब क्यों ना हो,
माचिस या पंखे, या रेलगाड़ी या कुछ और,
ढूंढे तुम्हारा कोमल मन,
अनिर्णय हो सामने, अश्वत्थामा की तरह,
भोर लगे की, है मीलों दूर,
तो दौड़े आना– इस ओर,
बेझिझक, बिना सोचे,
मैंने कह दिया है बेटी को,
यह घर तुम्हारा है– सिर्फ तुम्हारा।

ना– पुलाव, ना सही,
रुमाली रोटी, राजमा ना सही,
तेरी माँ के हाथों की पंजीरी,
किसी पकवान से कम है क्या?
ना सही, रेशम के गलीचे या जरी के पर्दे,
अपने आँगन की हवा,
किसी शौक से कम तो नहीं,
मिल बैठेंगे साथ, फिर आंसूओं का क्या?

दीवार के उस पार हमारा घर तो नहीं?
कभी किसी मोड़ पर लगे की खारी है,
छितरी– छितरी, हर जिम्मेदारी है,
तो दौड़े आना– इस ओर,
बेझिझक, बिना सोचे,
मैंने कह दिया है बेटी को,
यह घर तुम्हारा है– सिर्फ तुम्हारा।

अवनि प्रकाश श्रीवास्तव
स्नातकोत्तर शिक्षक (गणित)
के.वि. वाहन निर्माणी, जबलपुर, म.प्र.

68
हिंदी-नमन

नमन हिंदी को करता हूँ कि यह भाषा हमारी है,
चरण हिंदी के पड़ता हूँ कि यह आशा हमारी है।
सुनो भारत के हर कोने से यह आवाज आती है,
यही भाषा तुम्हारी है, यही भाषा हमारी है।
जो मेरे कंठ पर सजता मधुर वो राग है हिंदी,
जो तेरे दिल में है बजता सुरीला साज़ है हिंदी।
कि जिसकी एक आहट पर करोड़ों झूम जाते हैं,
वो मिश्री घोलने वाली मधुर आवाज है हिंदी।
मेरी हिंदी से बेहतर और भाषा हो नहीं सकती,
ये प्यारी हमें जितनी विभाषा हो नहीं सकती।
अरे! इसको न तुम भूलो ज़माना तुमको भूलेगा,
ये भारत भर की आशा है निराशा हो नहीं सकती।
जो इसमें कम उतरता है वो इसको कम समझता है,
कोई बाधा समझता है कोई उलझन समझता है।
किनारे बैठकर मोती नहीं मिलते समझ लेना,
जो इसमें डूब जाता है वो इसके गुण समझता है।
अगर माँ भारती के लाल हो सच्चे तो सुन लेना,
अगर इस देश से तुम प्यार करते हो तो सुन लेना।
अगर दुनिया में भारत कि तुम्हे जो लाज रखनी है,
तो पूरी शान से हिंदी को अपनी शान चुन लेना।

उमाशंकर पंवार
स्नातकोत्तर शि. (हिंदी)
के.वि., चमेरा नं.–1
एन.एच.पी.सी., खैरी (हि.प्र.)

69

नया विहान

सूरज को कर में लेकर
हम अन्धेरा मिटाने आये हैं,
नया विहान लाना है
यह संदेशा फैलाने आये हैं। नया विहान.....

प्रचंड तूफानों का सिलसिला है
फिर भी हमको नहीं गिला है,
ले पतवार दो हाथों में
हम पार लगाने आये हैं। नया विहान.....

गली–गली भ्रटाचार फैला
इंसाफ बंधा जंजीरों से,
दिल मजबूत करके हम
अत्याचार मिटाने आये हैं। नया विहान.....

हो कैसी भी राह मगर
हम धर्म न भूलेंगे अपना,
सत्यमूल है जीवन का
हम ये बतलाने आये हैं। नया विहान.....

बढ़ती जा रही हिंसक प्रवृत्ति
पीड़ित हर मन–प्राण है,
गा–गा कर हम राष्ट्रगान
हम प्रीत फैलाने आये हैं। नया विहान.....

राम सिंहासन ठाकुर
स्नातकोत्तर शिक्षक (हिंदी),
के.वि. गच्चीबौली, हैदराबाद

70

कोई चिड़िया अब मेरे आँगन में नहीं चहचहाती

कोई चिड़िया अब मेरे आँगन में नहीं चहचहाती
वह चिड़िया
जो अलस भोर ही
खिड़की पर चोंच मार कर मुझे जगाने आती थी
मेरे आँख खोलने से लेकर उठने तक
कलरव मचाती थी
जब मैं आँगन में
रंग बिरंगे सूत से बुनी चारपाई पर बैठ खाना खाती थी
तो दबे पाँव चुपके से मेरे पास चली आती थी
एक टुकड़े की आस में बैठी बतियाती थी
और दाना मिलते ही
फुर्र हो मुंडेर पर खुशी के गीत गाती थी
अब वह नन्हीं गौरेया कहीं नजर नहीं आती
क्या उस ने देख लिया है किसी होर्डिंग में
किसी प्राइवेट डॉक्टर का कम पैसों में अल्ट्रा साउंड करवाने का इश्तिहार
या उसने देखे है उस माँ के आंसू
जिसे बेटी को
गर्भ में ही मारने के लिए विवश कर दिया गया था
या फिर उसने कहीं से सुन लिया है
निर्भया और दामिनी का दुखांत
या किसी रेप विक्टिम का घर की चार दिवारी में सिसकना
उससे सहा नहीं गया
यह भी हो सकता है
किसी दहेज़ की बलि चढ़ी नव सुहागिन की अर्थी से पाला पड़ गया हो

कुछ तो हुआ है
कुछ हुआ ही है
शायद उसकी अपनी किसी सिक्स्थ सेंस ने उसे सिखा दिया है
यह शहर अब
निरापद नहीं है लड़कियों के लिए
और वह चली गई है
दूर बहुत दूर
जहाँ वह जी सके सुकून से
गा सके तराने आज़ादी के
और शहर
इस शहर में सड़कों पर अब घूमाँ करते हैं
भौंकते पागल कुत्ते
आपस में सींग भिड़ाते
कुछ आवारा सांड
और गंदगी के ढेर में लोटपोट होते सूअर
या फिर अपने हाथों से
अपना नाक आँख और मुंह कान ढके चंद लोग
जो देख कर भी कुछ नहीं देखते
सुन कर भी कुछ नहीं सुनते
बोलना चाह कर कुछ नहीं कहते
जब कभी पा जाते हैं
किसी चिड़िया को अकेले
दबोच कर पंख नोच फेंक देते हैं सिसकने और सहमने को
ताउम्र
इसीलिये अब
कोई चिड़िया इस शहर में नहीं आती।

स्नेह लता गोस्वामी
सनात्तकोत्तर अध्यापक (हिन्दी)
के. वि. नं. 4 बठिण्डा, पंजाब

71
गुरु और शिक्षा

जन्म लेने से पूर्व,
शायद यमराज की सभा में, चित्रगुप्त कह उठा होगा,
महाराज आत्मा पवित्र है।
मैं झूम उठा हूंगा।
अमरता मिलेगी, मिलेगी योनि शायद बेहतर,
जन्म के साथ मिली बौद्धिकता ने अहसास कराया कि,
मैं हूँ गुरु,
मैं हूँ आचार्य,
मैं हूँ शिक्षक,
मैं हूँ अध्यापक, धरा का।
मगर संसार के प्राकृतिक फेर में,
बस मैं फंसा कि फँसता चला गया।
शिष्या बनी मेरी आत्मा के संसर्ग में,
मेरा पाटन मेरी उन्नति का पर्याय बना,
मैंने बेच दिए ज्ञान के हीरे,
माया के चंद टुकड़ों के लिए,
मैं ढूँढता रहा अपना वजूद,
अपने मन दर्पण में,
नहीं खोज पाया यमराज की सोच।
मेरे पवित्र कर्मों का पल प्रतिफल बोध,
क्यूँ खोता जा रहा है सरेआम,
अर्थशास्त्र की व्याख्याएं,
नित हो रही हैं मौखिक अर्थों में,
जिसका अंत मुझे झकझोर रहा है
गुरु और शिक्षा के बीच।

सुशील कुमार ''आजाद''
हिंदी प्राध्यापक
के.वि., भारतीय राजदूतावास, मॉस्को

72
जिंदगी के पन्ने

मैं पलट रहा हूँ अपने जीवन के
कुछ अनदेखे पन्नों को
कुछ कोरे कुछ दाग के धब्बों से
भरे पन्नों को
कुछ इतराते कुछ इठलाते पन्ने
कहीं दीख रहें हैं खुद से कतराते पन्ने
कहीं खुशियों के मद में मदमा, पन्ने
कहीं अहंकार से गदरा, पन्ने
अपने ही आकाश में कुछ टिमटिमाते पन्ने
घनघोर अमावस में ज्वार लाते पन्ने
कुछ कहते कुछ मुस्कुराते पन्ने
सुन के पदचाप मेरी करवट बदलते पन्ने
गिरगिट सा रंग बदलते पन्ने
कहीं गिरते कहीं उठते कहीं खिसकते पन्ने
कहीं थामते दामन, तो कहीं हाथ झिटकते पन्ने
कहीं खुशी, कहीं गम को संभाले पन्ने
कहीं स्वयं को नींद से जगाते पन्ने
कहीं खोते, कहीं रोते, तो कहीं पाते पन्ने
अँधियारे में खुद से खुद को मिलाते पन्ने
नीरव आकाश में अपने परायों को गिनाते पन्ने
कहीं कटते कहीं, जुड़ते कहीं, गिरते कहीं, उठते पन्ने
बच्चों की नादानी और अपनी मनमानी से भरे पन्ने
कुछ दिखता नहीं कुछ सूझता नहीं इतने हुये ये स्याह पन्ने।

विनोद कुमार तिवारी
प्रशिक्षित स्नातक शिक्षक (हिंदी)
के.वि., नं. 1 रायपुर (द्वितीय पाली)

73
ज़िन्दगी के मायने

वो कहते हैं तुम्हें भीड़ का नेतृत्व करना है
मैं कहती हूँ मुझे भीड़ का हिस्सा बनना है
वो कहते हैं, केवल अच्छा है नम्बर वन ही,
मुझे बाकी के अंक भी पसंद हैं
वो कहते हैं दुनिया में आकर कुछ हटके करो
मैं कहती हूँ की मानव जीवन मिला है, जी भरके जियो
वो कहते हैं सफलता ही सबकुछ है
मैं कहती हूँ असफलता के भी कुछ मायने हैं
और असफलता ही, सफलता की पहली सीढ़ी भी,
वो कहते दिमाग की सुनो वही सब कुछ है
मैं कहती हूँ की दिल की सुनो, दिल नहीं तो कुछ भी नहीं
वो कहते, जिंदगी के मायने, सब कुछ पा लेने में है
मैं कहती जिन्दगीं का सुख बांटने में है
वो कहते हैं जिंदगी को सुनियोजित करो
मैं कहती हूँ जिंदगी योजनाओं से परे है
वो कहते हैं जिंदगी को नियमबद्ध करो
मैं कहती हूँ जिंदगी को दायरों में न बांधों दोस्तों
जिंदगी तो जिंदगी है
हमारी झोली में क्या आया
ये जानने की हमें ज़रूरत नहीं
आज हंस लो कल का क्या पता
कल पे हमारा बस नहीं।

डॉ. तरुणा
टी.जी.टी. (कला शिक्षा)
के.वि. नं. 6, जयपुर

74
जीवन का पल

जीवन की हरियाली में,
जीवन के चेतन पन्नों पर
कुछ नया सपनों का सारांश।
कुछ ऐसा, कुछ वैसा
बिल्कुल जीवन के जैसा
शास्वत के पहचान पर।
नवीनता के नियम जैसा
जमीन और आसमान जैसा।
कितना क्षण भंगुर है जीवन
पलभर बचपन पलभर यौवन।
मगर, इति सबका निश्चित
पर तू इससे क्यों विचलित।
खुशियां फैलाओ, खुशबू महकाओ
जग आनन्दित कर, हंसो हंसाओ
दो पल जीना है तो क्या?
कुछ अच्छा कर जाओ।

डॉ. मनोज कुमार तिवारी
प्र.स्ना. अध्यापक (संस्कृत)
के.वि. जमालपुर (मुंगेर), बिहार

75
दादाजी का बसेरा

रोजी–रोटी का साधन वही पुराना टाइपराईटर था।
सड़क किनारे छाँव तले दादाजी का बसेरा था।

भूखे–प्यासे दिनभर
टाइपराईटर चलाते थे
पैसों को पैसे जोड़कर
जीवन का पहिया चलाते थे

बड़ी–सयानी घर में बेटी
बीमार माँ जमीं पर लेटी थी
कॉपी–पुस्तक माता की सेवा
यही उसकी दिनचर्या थी

दिनभर मशीन चलता
जी जान से मेहनत करता

न जाने जीवन में खोटी थी?
गोरे धंधे पे काली नज़र बैठी थी
एक दिन आये दादाजी से बोले
वर्दीवाले बाबू, ''चल बे बूढ़े
हटा गन्दगी नहीं देता तू चंदा,
क्या बाप का राज है करता यहाँ तू धंधा?''

दादाजी बोले, ''बाबू हाथ फैलाकर
आज तक नहीं मांगी किसी से भीख,
पसीना बहाकर जिओ सही
गुरु–माता–पिता ने दी है सीख।''

बाबू बोले, ''ऊपर देना है मुझे जवाब
शाम होते ही खिला–पिलाना है उन्हें दारू–कबाब,
मुझे नहीं है तुझ से हमदर्दी
नहीं तो जाएगी मेरी वर्दी।''

दादाजी हाथ जोड़कर खड़े थे
अपनी सच्चाई पर अड़े थे।
नजरें गड़ायें जमीं पर दादा,
लोग तमाशा देखते खड़े थे।
वर्दीवाले बाबू ने एक नहीं सुनी
टाइपराईटर पर लगाई लात दूनी
गिर पड़ा टाइपराईटर रस्ते पर सूनी
गाली–गलौज करता चल पड़ा शनि
बिखरे संसार में नयी उम्मीद जगाई
दादाजी ने कभी हार नहीं मानी
फिर से जिंदगी से दो हाथ कर दिए
जिंदगी का गम आँसुओं से भर दिए।

चेहरे पर मुस्कुराहट दिल में दर्द छुपा था
शायद इंसान ही नहीं भगवान भी खफा था
रोजी– रोटी का साधन वही पुराना टाइपराईटर था।
सड़क किनारे छाँव तले दादाजी का बसेरा था।

लक्ष्मण शिंदे
प्रशिक्षित स्नातक शिक्षक
के.वि., वायु सेना शिविर, बीदर

76
देव वृक्ष-नीम

गगनचुंबी भव्य भवन
कुएं से लगती सड़क
हर समय वाहनों की घड़घड़ाहट
तेल के धुएं से
कड़ुआती आंखें
ऐसा तो नहीं था
मेरा गांव

आज भी ढूंढ रही हैं आंखें
गांव की सीमा पर लगे
उस विशाल नीम वृक्ष को
जो साधनारत योगी सा
एक पाँव पर खड़ा
सदियों की रागात्मक
संवेदना समेटे अंतर में
करता था सब का स्वागत
सैकड़ों डालियां फैलाकर।

दुनिया सोती थी
वह जागता था।
दुआएं मांगता था।
हर आने–जाने वाले के लिए
इसी नीम की छाया में
घोड़ी पर बैठे दूल्हों ने
किया था विश्राम।
शहनाइयां बजीं थी।
कितनी बालाओं की
उठी थी सुहाग डोली।
आज, उस वृक्ष का निशान
भी नहीं दिखता कहीं।
ऐसा तो नहीं था
मेरा गांव।

मां बुहारती थी आंगन।
सुनाती थी यहीं बैठ कर
करवा चौथ की कहानी।
कितने कोमल हाथों में
लगती थी मेहंदी।

गीतों भरी शाम, नाच गान
''नौटंकी'' रामलीला
झूम उठती थी डाली–डाली
वर्षा की बूंदे पाकर।
झूले पड़ते थे मोटी शाखों पर
ऊंची पैंग भरती
नई नवेली दुल्हनें।

आग सी जलती दोपहर में
ठंडी बयार का झोंका देकर
पसीना पोंछा था नीम ने।
थके पथिक को दे विश्राम
बचाया प्रदूषित वायु से।
पर अब तो बची है केवल
भटकी हुई सी यादें।
ऐसा तो नहीं था
मेरा गांव।

वर्षों पहले चल बसी थी
छन्नों की दादी।
इसी नीम के नीचे
बांधी गई थी उसकी अर्थी।
असमय आ गई
मुन्नी की आंखें
तो मां ने पकड़ा दी थी
नीम की डाली उसके हाथ में।

जाने कितने घावों पर
घिसकर लगी थी
नीम की छाल
आज नहीं है
वह चबूतरा, घनी छाया
कच्ची–पक्की निंमोरियाँ।

पता नहीं किसने उजाड़ फेंका
यह योगी, देव वृक्ष
ऐसा तो नहीं था
मेरा गांव।

डॉ. मेधा उपाध्याय
पी.जी.टी. (भौतिक विज्ञान)
के.वि., नं.–1, ए.एफ.एस.
हलवारा

77
देश हमारा

ये पहाड़, ये नदियाँ झरने
सबके रास्ते अपने–अपने!
उनके भी मन में हैं सपने
संदेशों के पहने गहने !!

प्रेम में डूबी हुई नदी है,
तटबंधों संग सखी बदी है।
हरे–भरे आँचल लहराती
देख चुकी वह कई सदी है।।

प्राणवायु वृक्षों से मिलती
जीवन की बगिया है खिलती
औषधियों के देवरूप सम
वनस्पतियाँ जंगल में दिखतीं।।

ऊँचे पर्वत शिखर हमारे
चारों ओर दृष्टि हैं रखते
दुश्मन का संकेत मिला गर
एक नई सृष्टि रच सकते।।

जाति धर्मगत भेद नहीं है,
संस्कारों से एक सभी हैं।
सबकी अपनी भाषा बोली
कभी नहीं लगते अनेक हैं।।

प्रजातांत्रिक राज है भारत
संविधान पर नाज है भारत
नीति, मूल अधिकारों वाला
स्वतंत्रता का ताज है भारत।।

विश्वशांति का भी नायक है
जन–गण–मन का भी दायक है
अमर तिरंगे की लहरों पर
समृद्धि का भी परिचायक है।।

श्रद्धा आचार्य
स्नातकोत्तर शिक्षिका (हिन्दी)
के.वि., खुरदा रोड (ओडिशा)

78
दोहा एकादश

प्रीत पान रसाल श्रम, चाय घड़ा विश्वास।
अच्छे तो तब ही लगें, जब पूरे पकि जास।।
दृढ़ प्रतिज्ञ नर हृदय में, करहिं जो एक विचार।
तुरतहि हरि पूरा करें, बिना बिलम्ब विचार।।
लेत समय नर धेनु सम, देत समय मृगराज।
यह उधार की गति रहै, सोच करहूँ व्यापार।।
प्रभु चाहे सब होत हैं, नर चाहे ना होय।
सागर तट नरियल फरै, दाख रेत में होय।।
ठग कितना सीधा बने, तबौ ना छोड़ें दाँव।
राख पड़ी आगी रहै, जला देत है पाँव।।
अगर बृहस्पति लग्न में, बैठा हो निर्द्वन्द्व।
कुग्रह कुछ करि ना सकै, कहें ज्योतिषी सन्त।।
लोकेष्णा अच्छी लगै, करता अगर प्रवीन।
फणिधर भी झूमत फिरै, बजता है जब बीन।।
व्हटस्प, ट्विटर, फेसबुक ये सारे हैं खेल।
बच्चे से बूढ़े लगे, देखो ठेलम ठेल।।
अपनी इच्छा मारि के, बेटा पाले चार।
माँ–बाप कठपुतली हुए, बेटा हुए सरदार।।
बुरी संगति के कारण, करत बुराई लोग।
निर्मल जल माटी मिले, कीचड़ कादा होय।।
लक्ष्य एक ही राखिए, सदा करो संधान।
प्रभु की कृपा होयगी, लक्ष्य हस्तगत जान।।

दिनेश उपाध्याय
टी.जी.टी (संस्कृत),
के.वि., जनकपुरी, नई दिल्ली

79
नेत्रदान-महादान

उम्मीद की उर्मि नेत्रदान
आशा का अंचल नेत्रदान
तम को प्रकाश से जोड़ने की
सच्ची मुहिम है नेत्रदान
नेत्रदान है महादान
इससे होता जनकल्याण
ज्योति बिना है जीवन सूना
रंग हीन आँगन का कोना
भर सकते तुम इसमें ज्योति
जिसकी आस सभी को होती
करके नेत्रदान ओ आली
भर दे जीवन मे खुशहाली
नेत्रदान...

नयन नहीं, रौशनी नहीं है
जीवन है, ज़िंदगी नहीं है
रंग हीन, रस हीन है जीवन
पराश्रित, एक बोझ है जीवन
आंखो में ज्योति तुम भर दो
नेत्रदान से रौशन कर दो
नेत्रदान...

क्या होता है रंग ना जानूँ
मैं मन की आँखें पहचानूँ
झंझावात है जीवन अपना
ना है डोर न कोई सपना
खुशियों के तुम पंख लगा दो
नेत्रदान से ज्योत जगा दो
सपनों को ऊंची उड़ान दो
नेत्रदान का महादान दो
नेत्रदान...

काश ये दुनियाँ ऐसी हो,
पर पीड़ा का मर्म संजो,
अंधकार को दूर भगा,
नेत्रदान कर ज्योति ला,
तब ये अवधारणा सच हो,
तमसो माँ ज्योतिर्गमय
नेत्रदान है...

नीना बक्शी
संगीत शिक्षिका
के.वि., भुरकुंडा

80
परदेस में

परदेस में सूरज–चाँद भी, अपना सा नहीं दिखता।
साफ़–सुथरी सड़कें, सूनी नगरिया,
कहीं कोई चेहरा प्यारा सा नहीं दिखता।
चंचल उद्दात लहरें, समंदर के तीरे
शुभ नील आकाश, रेतों की रश्मि
मगर दूर तक कोई खोमचा नहीं दिखता।
पर्वतों की श्रृंखला, हरे–भरे पेड़
फूलों से लदी डाली, बर्फीली पवनिया
ना ध्वजा–पताका, ना घण्टे–घड़ियाल
ना आरती–अजान, ना ढोल–नगाड़े
कहीं धूप–हवन का झोंका नहीं मिलता।
बर्फ़ों की चादर, जमी हुयी झीलें
रुई की बारिश में स्केटिंग की मस्ती
मगर कहीं कोई शिवाला नहीं दिखता।
ना गौग्रास, ना कुत्ते की रोटी
ना पीपल की छैया, ना बरगद की गपशप
ना रंगीली छम–छम, ना ठहाकों की गुंजन
अनुशासित सा जीवन, प्रोटोकॉल में मृत्यु
कहीं कोई जुगाड़ का कमाल नहीं दिखता।
परदेस में सूरज–चाँद भी अपना सा नहीं दिखता।।

डॉ. पूनम भारद्वाज
प्राचार्या
के.वि., सेक्टर– 22, रोहिणी, नई दिल्ली

81
फिर जन्मी

जन्मी जब कुटिया में बिटिया,
नाम रखा उसका 'अगवानी',
लछमी का ही रूप बनी वो,
माँ बाबा की प्रथम निशानी,
पैर हुए भारी फिर माँ के,
तन का पिंजरा बना ठठरिया,
सुत की आशा में जन्मी फिर,
नाम पड़ा मुनिया का मरिया,
कुलदीपक की आस बँधी फिर,
मान मनोती हुई घनेरी,
घर में आई फिर से पुत्री,
उसका नाम पड़ा बहुतेरी,
तीन देवियों का संगम था,
फिर भी घर मे खुशी ना आई,
अबकी बार जनी फिर मां ने,
कहलाई अब वो भरपाई।

डॉ. अन्जू लता सिंह
पी.जी.टी. (हिन्दी),
के.वि. नं. 2, फरीदाबाद

82
भाषा की परिभाषा

सृजन करो, विध्वंस नहीं;
हो स्पर्धा, प्रतिद्वन्द्व नहीं।
है भाषा का उत्थान तभी,
जब भाव शिखर पर जा पहुंचें;
हृदयों के बंद कपाटों को लें खोल,
चलो नभ को सींचें!
क्या संकेतों की दुनिया में
ये मानस नहीं पनपता है?
क्या मूक–बधिर इक दूजे के
भावों को नहीं समझता है?
तात्पर्य नहीं लेकिन इसका,
हम सब अधरों को ही सी लें!
क्योंकि है मौन नहीं कुछ भी,
ये अम्बर, धरती, वायु नहीं।
सबकी अपनी ही बोली है।
सबकी अपनी सुर–ताल भी है।
तो आओ हम जन–जन के मन में,
'भाषा की परिभाषा' रच दें।

भाषा सरिता है, भावों को
जो जन–जन तक पहुंचाती है,
हृदयों में बंद जड़–भांति हुए
भावों के हिम को पिघलाती है।
हर प्रान्त–देश की संस्कृति से,
मानव–वट को पनपाती है।
हिन्दी, अंग्रेजी, गुजराती,
जब भाषाएँ सब मिल जायें;
उस सागर के तट–बीच खड़े,
हम गीत यही ये दोहरायें!
हो देश कोई, हो वेश कोई
हो चाहे कोई भाषा–भाषी
हम मानव हैं सबसे पहले
औ' मानवता के अभिलाषी।

नितिन कुमार मिश्र
स्नातकोत्तर शिक्षक (गणित)
के.वि., ए.एम.सी., लखनऊ

83
मन धीरे-धीरे गाओ रे

मन धीरे धीरे गाओ रे।
कुछ बीती आप सुनाओ रे। मन...

मधुमय बन्धन कैसे टूटे।
जो अपने थे क्यों कर रूठे?
आभासित सच निकले झूठे।
इस मन को फिर समझाओ रे। मन...

एक शून्य हृदय में पलता है।
वैश्वानर जलता रहता है।
वह अब भी अपना लगता है।
यह सत्य उसे बतलाओ रे। मन...

इति! फिर से कोई विलाप नहीं!
है खुद से वार्तालाप नहीं।
जो सुख दे वह आलाप नहीं?
नव तान सृजन की गाओ रे। मन...

आदित्य विक्रम
के.वि. नं. 2, आरमपुर
कानपुर, उ.प्र.

84
मानवता : बौद्धिकता

है निर्भर मानव की सफलता, बौद्धिक प्रखरता पर
या निर्भर भावप्रवणता एवं संवेदनशीलता पर
था डूबा मन गहन विचार मंथन में
सहसा मन को आलोड़ित कर गई, कवि दिनकर की पंक्तियाँ
शीतलता की है राह हृदय तू यह संवाद सुनाता चल।

सच हृदय ही संवेदनशील मनुष्य को सद्‌गुण युक्त करता
सात्विक गुणों से आप्लावित करता
श्रेष्ठ उदात्त गुणों से भरता
है क्या कारण विश्व का प्रायः हर व्यक्ति,
है मानसिक व्याधियों से ग्रसित
कारण अति महत्वाकांक्षा निजी मनःस्थिति।

आज विश्व में चल रहा संक्रमण का दौर,
आज आगे बढ़ने की अभिलाषा लिए हर व्यक्ति रहा दौड़,
ऐसे में स्मरण हो उठती भारतीय संस्कृति की सहिष्णुता
जिसने विदेशियों के मन को मोहा
पर आज मानव पागल पश्चिमी अन्धानुकरण में
परिणाम समाप्त हो रही सद्भावना सभी के दिलों में।

है चारों ओर मचा हाहाकार
असंवेदनशीलता व्याप्त है चहुँ ओर
कैसे पहुँचे देश उन्नति के पथ पर
क्या यह प्रगति संभव मात्र बौद्धिक प्रखरता के बल पर?

होगा अग्रसर देश उन्नति की ओर
नहीं होगी निराशा किसी ओर
यदि हो समन्वय अति बौद्धिकता और भावाप्रवणता में।।

निहित समस्त ब्रह्माण्ड में सुनिश्चित तारतम्य एवं सामंजस्य
यदि हो प्रकृति से प्रेरित मानव
अपनाए समता सहयोग उदारता के भाव
मानव होगा उर्ध्वमुखी, करेगा चतुर्मुखी विकास,
चतुर्मुखी उन्नति के निमित्त तो जरूरी, विवेक,
बुद्धि और विचार चतुर्मुखी उन्नति के निमित्त तो जरूरी समन्वय,
बौद्धिकता एवं भावप्रवणता में।।

चतुर्मुखी उन्नति के निमित्त तो जरूरी समन्वय, विवेक,
बुद्धि और विचार शक्ति।।

डॉ. वीणा सिंह
स्नातकोत्तर शिक्षिका (हिंदी)
के. वि. आई आई टी, पवई
मुम्बई

85
बेटी की माँ

एक दिन बैठी खिड़की पे मैं,
झाँक रही थी आंगन में मैं।
आम के उस पेड़ पर,
था एक चिड़िया का बसेरा।।
वो पानी दाना चोंच में भरकर
अपने बच्चों को खिलाती
चाहे दिन हो या हो सवेरा।।
तभी माँ ने आवाज़ लगाई,
आजा बेटा खाना खिला दूं,
तुझे खिला के अपनी भूख मिटा लूं।।
तभी झमाझम बारिश आई,
दौड़ पड़ी आंगन में मैं,
देखा चिड़िया के बच्चे
भीग रहे थे बारिश में।।
चूं–चूं करती चिड़िया आई,
अपने पंखों की छतरी
उन पर लगाई।।
मेरी माँ भी दौड़ी आई,
बारिश में ना भीग जाऊं मैं,
अपनी चुन्नी मुझे उढ़ाई।।
खुद लुट कर सारा प्यार
अपने बच्चों में लुटाया
चिड़िया माँ हो या मेरी माँ
अंतर दोनों में एक ना पाया।।
इसीलिए तो कहते हैं,
ईश्वर सब जगह नहीं हो सकते
इसलिए उसने माँ को बनाया।।

चित्रा नायर,
पी.आर.टी., के.वि., नं.1, भोपाल

86
मैं अमलतास हूँ

मैं अमलतास हूँ, अमलतास हूँ, अमलतास हूँ।
प्रेम प्यार का मैं प्रतीक हूँ
प्रेम सुधा का मैं प्रवाह हूँ
मैं अमलतास हूँ, अमलतास हूँ, अमलतास हूँ।।
घने चितेरे जंगल हों,
या बियाबान सा ऊसर हो,
या दूर तलक फैला पठार हो,
या हो फिर फूलों की घाटी,
या हो घर आँगन की सोंधी सी माटी,
मैं इन सब की सुवास हूँ।। मैं अमलतास हूँ
शैशव–शिशु हो गया हो प्यारा बचपन
रहूँ भरा यौवन से प्रतिक्षण,
या लिए हुए हूँ जर जर तन मन
मैं खुशहाल दिलों की आस हूँ।। मैं अमलतास हूँ
इस वसन्ती मौसम में,
पीले–पीले पुष्पों से,
प्रकृति मेरा श्रंगार कर रही,
मंद पवन भी धीरे–धीरे
छू–छू कर मनुहार कर रही,
मधुबाला की वेणी में,

सजने को मैं, बेक़रार हूँ।। मैं अमलतास हूँ
कुमुद और कुमुदनी के जैसे,
रति और मधुकर के जैसे,
सूरज की किरणों के जैसे
सागर की लहरों के जैसे
अन्तर्तम में, प्रेम ज्वार की
लहरों का मैं विकास हूँ।। मैं अमलतास हूँ
तन को रोमांचित करके
मन को उल्लासित करके
दिल को आह्लादित करके
खुशियों से अच्छादित करके
जवां दिलों की धड़कन में,
बसने को मैं बेकरार हूँ।। मैं अमलतास हूँ
गर्वित हूँ खुद ही खुद पर
हर्षित हूँ खुद के ऊपर
प्रेमी युगलों के चाहत की
मैं तलाश हूँ।। मैं अमलतास हूँ
मैं अमलतास हूँ
प्रेम प्यार का मैं प्रतीक हूँ
प्रेम सुधा का मैं प्रवाह हूँ
मैं अमलतास हूँ, अमलतास हूँ, अमलतास हूँ।।

केशव प्रसाद पांडेय
टी.जी.टी (विज्ञान)
के.वि., द्वारका
सेक्टर 5 (प्रथम पाली), नई दिल्ली

87
मैं हूँ देश, मैं विदेश

मैं हूँ देश, मैं विदेश,
मैं ज़मीन उर्वर। वो आसमां नीला।
पंख फैलाकर ले तिरंगा, मैं ही उड़ चला।
मैं ही श्वांस, मैं विश्वास
यह देश मेरा एहसास।
ईद की मिठास, होली का गुलाल,
सभी हैं एक समान।
जो गुज़रा उसका गिला नहीं,
आगे जो है, मेरा सभी
केसरी, श्वेत, हरा, सजा माथे पर
कौन सा श्रृंगार फिर साजे भला।
मैं भगत, मैं आज़ाद, मैं ही हूँ अशफाक़,
प्राण देकर अपने करूँ दुश्मन को मैं खाक़।
कश्मीर से कन्याकुमारी है बस मेरा
कौन है आगे मेरे जो ताने अपना सीना?
अपने लहू से सीचूँ मैं, अपनी ये धरा,
चुनौती बनकर सीमा पर, मैं ही हूँ खड़ा।
मैं ही मान मैं सम्मान, मैं ही देश की आन।
तिलक लहू का लगा के तुझको, दे दूँ अपनी जान
मैं ही आज मैं हूँ कल, मैं ही हूँ भारत।
हाँ मैं हूँ ये भारत, मैं ही हूँ भारत, मैं ही हूँ भारत

मौली पाल
स्नातकोत्तर शिक्षिका (अंग्रेज़ी)
के.वि., नं. 1, भोपाल

88
ऊँचाई का शिखर

मैं ऊँचाई तक पहुंचना चाहता हूँ,
मेहनत कर हर बाधा को दूर करना चाहता हूँ।

जिंदगी की दौड़ में हमेशा प्रथम आना चाहता हूँ,
हाँफ कर, पीठ दिखाकर भागना नहीं चाहता हूँ।

जिंदगी की राह में आगे ही आगे बढ़ना चाहता हूँ,
ऊँचाई मुझे पसंद है, मैं उसे पाना चाहता हूँ।

ऊँचे पद, ऊँचे लोगों का बड़ा नाम है,
मैं उसे पाकर सबका ऋण चुकाना चाहता हूँ।

मैं गिरना नहीं चाहता हूँ,
जैसे डाली से फूल बिखरता है।

जैसे आसमान से तारा टूटता है,
जैसे पेड़ से फल गिरता है।

सब धरती पर गिरकर बिखर जाते हैं,
अपना वजूद, अपनी पहचान खो देते हैं।

लोग उसे पैरों से रौंद कर चले जाते हैं,
मैं केवल ऊपर रहना चाहता हूँ।

जैसे ध्रुव तारा रहता है, चमकता हुआ आसमान को सजाता हैं,
ऊपर ईश्वर का वास है, मैं उनकी कृपा दृष्टि चाहता हूँ।

ऊँचाई की बात ही निराली है,
वहाँ से हर चीज़ बौनी है।

ऊँचे लोगों की दुनिया न्यारी हैं,
बड़ा नाम बड़ी इज्ज़त, सब कुछ प्यारी है।

सारे लोग इनको सलाम करते हैं,
दौड़–दौड़ कर इनका काम करते हैं।

यही सोच कर मैं ऊपर बढ़ना चाहता हूँ,
अब तो लगता है आसमान तक पहुँच कर ही दम लूँगा,
मेहनत से जी न चुराकर पढ़ने में मन लगाऊंगा।

सोनाली मैत्रा
टी.जी.टी., (हिंदी)
के.वि. नं. 1 उप्पल,
हैदराबाद

89
वेदना एक नदी की

वो स्वच्छ जल निर्मल धारा, बहती कलकल अविरल बाला
कितनों का उद्धार किया, तृप्त हुआ जग जीवन सारा।

जिनके आगोश में पनपा जीवन, और पली जहाँ सभ्यताएं
ग़मगीन उदास खड़ी है, धरती की ये धाराएँ।

मानवता आभारी है जिनकी, वो कंद–मूल और कन्दराएँ
सभी पूछती हैं आज जग से, कहाँ खो गयीं वो जलधाराएँ।

आधुनिकता जब से लगी बरसने, दुर्भाग्य छा गया उन पर सारा
उनकी शिराओं को बांध–बांध, फैलाया हमने उजियारा।

दज़लाफरात नील और सिन्धु, सजाई जिसने फुलवारी
कौन है दोषी इस रीतेपन का, आज क्यों उनका अक्स है खाली।

कभी थी हमारी जीवन रेखा, पल पल उसको मरते देखा
मिट गयी गर इस धरा से, क्या होगा कब किसने देखा।

परिणाम
अधमरी सी लाश घुट–घुट जी रही,
मौन है विस्मित गरल रस पी रही
पापियों का पाप उफन आया है अब,
करेगी संहार, प्रलय ही सही

आपदा देखी है जिसने, उत्तराखंड पहाड़ की
दर्द समझा होगा वो, तटिनी गिरिराज की

तड़प कर विफर पड़ी, गंगा सुता पहाड़ की
जैसे जटा खोल दी हो, शंकर ने अपने भाल की

रौंदती दहाड़ती हुंकारती फुंफकारती
कहर ढा रही है मानों, सिंहनी हिमराज की

उफन रही थी गंगा मानो, बादलों के वेश में
टूट रही थी बिजलियाँ उसके ही अपने देश में

कभी आई थी धरा पर, बन कर प्राणदायिनी
भागीरथ ने था बुलाया, संतों की थी वो तारिणी

न्यायपूर्ण था वो दंड, अक्षम्य अपराध को मिला
किया जल संहार, वो थी क्रोध की अधिकारिणी

पर क्या चीत्कार वो निर्दोषों का उसने सुना
मिट गए जीवन से पहले, बनी वो कुलनाशिनी

रम्यता बिखरी थी जहाँ, गंगा तेरे स्वरूप का
क्यों वो भीगा लहू से, बनी तू अत्याचारिणी

न्याय करना था तो दंड, देती उस उद्दंड को
अपराध जिसने है किया, दुःख दिया इस भूखंड को

विष मिला तेरी रगों में, बनाया प्राणघातिनी
आचमन का जल थी गंगा, रही न अब वो तारिणी।

रागिनी सिंह
प्रशिक्षित स्नातक शिक्षिका (सामाजिक अध्ययन)
के.वि. नं. 1, भोपाल, म.प्र.

90
वैश्विक ताप

प्रकृति का आज जमकर हो रहा दोहन
और वैश्विक ताप रूपी नाग डस रहा
इस पृथ्वी को अपनी फुंकार से,
यह धरा, जो संजोए, हुए अपनी छाती पर
अपरिमित, अक्षुण भार
जिसके कर्ज़ तले हम दबे हुए,
हम एहसान–फरामोश, माँ के आँचल को हल्का करने के बजा,
आतुर हैं उस पर ताप रूपी तलवार भोंकने हेतु,
सदियों से माँ ने सम्भाला हमारा वजूद
परंतु आज–
जब माँ को बचाने की बारी आई तो
विज्ञान की ओट में खड़ा मानव,
निर्निमिष बर्बाद होते देख रहा माँ को
या फिर इंतजार कर रहा उन पलों का
जहाँ मौसम दम तोड़ते नज़र आएंगे
या प्रकृति का बाढ़ रूपी सैलाब

अपने आँसुओं को समेटे,
बेबस धरा की कहानी लिख रहा होगा।
जनसंख्या का विकराल पिशाच श्वासॅ विहीन,
स्थूल साए कंक्रीट करता इसकी सतह को
एक डरावने स्वप्न की तरह परेशान करता है।
मुझे प्रतीक्षा है उस माँ की।
जिसमें श्वासॅ हो पर ताप न हो।
जिसका सीना हरा हो पर पतझड़ न हो
जिसमें जल हो, बाढ न हो,
आओ इन समस्याओं का समाधान निकालें
और अपनी पृथ्वी को गर्त में जाने से बचाएं।

नीलम कुमार
प्राथमिक शिक्षिका
के.वि., सिख लाईंस, मेरठ

91

शरणागत

निर्विकार के चिन्तन से ही होगे तुम विकार रहित,
फिर तब समग्रता से बनोगे सहित।
पवित्रम् के ध्यान से ही बनोगे पवित्र ओजस्वी,
तेजस के समागम में निहित है बनना तेजस्वी।
सत्यम् के अनुगमन से ही होगे तुम सत्यानुगामी,
मधुरतम् का स्वाद चखने पर ही होगे रसानुगामी।
पूर्ण के संयोग से होगे तुम योगी,
जो नासमझ हैं वही हैं बने माया के ढोंगी।
अनन्त के सम्पर्क में ही है छिपा तत्व का रहस्य,
जो समझ सके उसी के पास है, ब्रह्मा, विष्णु, महेश।
कर्मयोग से जुड़ते हुए,
नित नयी मणियों में गढ़ते हुए।
अपना सकते हो तो अपना लो अभी,
समय निकलने पर क्या मिलेगी मंजिल कभी।

अजित कुमार मिंज
प्रशिक्षित स्नातक शिक्षक (हिंदी)
के.वि., वायु सेना स्थल, बागडोगरा

92
एक शिक्षक-ऐसा या वैसा?

एक बालक जन्म लेता है शिक्षक बनने के लिए
शिक्षक बनता है चाव से, रुचि से,
समर्पण की भावना से–आजीवन शिक्षक की परिभाषा को
सार्थक करता है, अथक अविरत परिश्रम से।
एक बनता है मजबूरन शिक्षक–गलत चुनाव
हाय! ये सेवा उसके लिए ला इलाज रोग बन जाता है;
आजीवन कोसता है शिक्षक व्यवसाय को
एक शिक्षक ऐसा भी, एक वैसा भी!
एक शिक्षक पढ़ता है, पढ़ाता है
ज्ञान की ज्योति जलाता है;
छात्रों का प्रेरणा स्रोत बनकर, उन्हें जीवन पथ पर
सशक्त, सुदृढ़ बना, आगे बढ़ाता है।
एक शिक्षक पढ़ने से कतराता हैः
पढ़ते–पढ़ाते बोझिल सा हो जाता है।
एक शिक्षक ऐसा भी, एक वैसा भी!
एक शिक्षक थक कर चूर हो, फिर भी, कार्यरत रहता है।
बच्चों को नीति के पाठ पढ़ाता है, जीवन कौशल सिखाता है
कभी फटकार, कभी पुचकार, कभी दुलार, कभी संयम से बच्चों का दिल जीत लेता है।

भर देता है उनका हृदय उत्सुकता, उल्लास और संवेदन से
हृदय को आल्हाद की अनुभूति से।
एक शिक्षक देता है ताने और उलाहना
ह्रास करता है उस मासूम की सृजनशीलता का।
बच्चे का दिल दुखा कर, यह शिक्षक आगे बढ़ जाता है और
वो बेबस छात्र अपने टूटे दिल, टूटे अरमानों के टुकड़े,
आजीवन समेटता–पीछे छूट जाता है।
एक शिक्षक ऐसा भी।
कुछ शिक्षक कर्मठ, निःस्वार्थ भाव से
जुट जाते हैं इस उत्तम समाज सृजन कार्य में
देह उनकी मिट जाती है–पर वे जीते हैं
अपने छात्रों के दिलों में, मनों में–ज्ञान की ज्योत जलाते हैं
वे अपनी अमिट छाप छोड़ जाते हैं।
और कुछ शिक्षक शायद ही याद आते हैं और जख्मों को कुरेद जाते हैं।
ऐ मेरे मन, तू बता
तू कैसा है? सच बोल– स्वंय को परख, आत्म परीक्षण कर
क्या तेरा शिक्षक बनना
सार्थक है या निरर्थक?
फिर बता, तू कैसा शिक्षक है– ऐसा या वैसा?

वी. जया सालवे
स्नातकोत्तर शिक्षक (अंग्रेज़ी)
के.वि. नं. 2 कुलाबा, मुम्बई

93
शिक्षक-धर्म

जब तुम्हारा मान होगा, जब कभी सम्मान होगा
सद् तुम्हारे कर्म होंगे, तब हमारा नाम होगा।
तुम घड़े माटी के कच्चे, मन के निर्मल और सच्चे
गढ़ सके यदि हम तुम्हें तो यही सच्चा काम होगा।
तुम किसी के धन विपुल, तुम में है क्षमता अतुल
यदि उसे पहचान पाए, तभी सार्थक ज्ञान होगा।
लेखनी यह शस्त्र है, ज्ञान का ब्रह्मास्त्र है
थाम लो हाथों में इसको, लक्ष्य का संधान होगा।
तुम्हें चाहत ज्ञान की, हमें विद्या दान की
तुम बनो अर्जुन बनें हम द्रोण, विद्या दान होगा।
निरंतर अभ्यास हो, तुम्हें ज्ञान की प्यास हो
न कोई लालच न स्वार्थ, कर्म तब निष्काम होगा।
तुम ही देश के मान हो, भारती संतान हो
सही पथ तुमको दिखा दें, यही धर्म महान होगा।
यह बदलता काल है, यह समय की चाल है
पर परस्पर हम न बदलें, पराजित अज्ञान होगा।
चलें–भोगें साथ में, बल हो अपने हाथ में,
तेज को धारण करें हम, द्वेष का न नाम होगा।
ज्ञान का दीपक जलाएँ, झंझावतों से बचाएं
विश्वगुरू भारत का दुनिया में तभी तो नाम होगा।
ईश से यह माँगते, कर्तव्य अपने कर सकें
तुम सफल तो हम सफल, यह एक नया प्रतिमान होगा।

ममता द्विवेदी
स्नातकोत्तर शिक्षिका (हिन्दी)
के.वि. नं. 1, एस.टी.सी. जबलपुर, म.प्र.

94
सूर्य उदय होने को है

है सूर्य उदय होने को अब
तम से मत घबराना साथी
संघर्षों का नाम है जीवन
गम से मत घबराना साथी।।1।।

जब साथ नहीं कुछ जाता है
मन क्यूँ ये समझ न पाता है
परिवर्तन का नाम है जीवन
जो आता है वो जाता है।।2।।

बाधायें आती हैं आयेंगीं
पर हमको झुका न पायेंगीं
संकल्पों का नाम है जीवन
मुश्किल सब टल जायेंगीं।।3।।

कभी हारेंगे तो कभी जीतेंगे
असफल होने से क्या डरना
जिजीविषा का नाम है जीवन
जब तक हैं प्राण जतन करना।।4।।

हम काम किसी के आ जायें
जो रोता हो उसे हँसा जायें
परोपकार का नाम है जीवन
हम अपना धर्म निभा जायें।।5।।

क्या कमी रही यह ध्यान करो
तुम हो विशिष्ट यह भान करो
सामंजस्य का नाम है जीवन
नया लक्ष्य बना संधान करो ।।6।।

कर्तव्यों की बात तो अक्सर
अधिकारों के ही बाद रही
कर्तव्यों का नाम है जीवन
क्या बात हमें ये याद रही ।।7।।

विश्वासों से बँधना सीखो
उम्मीदों से जुड़ना सीखो
अभिलाषा का नाम है जीवन
आकाशों में उड़ना सीखो ।।8।।

माना सब डावाँडोल मिला
जीवन हमको अनमोल मिला
कर्मठता का नाम है जीवन
कुछ अद्भुत कर जाना साथी ।।9।।

है सूर्य उदय होने को अब
तम से मत घबराना साथी
संघर्षों का नाम है जीवन
गम से मत घबराना साथी।।10।।

दीपक कुमार शर्मा
स्नातकोत्तर शिक्षक (संगणक विज्ञान)
के.वि. क्रमांक 2, आगरा छावनी

95
ताज़ और तख़्त

दुनिया बड़ी बेरहम है, ज़िंदगी बड़ी सख्त।
हम पाकर रहेंगे फिर भी ताज़ और तख़्त।
हौंसला फ़ौलादी चट्टान सा,
विश्वाश संमुद्र सा गहरा होगा।
बुलंदियाँ गगन सी, धैर्य धरा सा होगा।
इक दिन हम काबू में कर ही लेंगे वक्त।
दुनिया बड़ी बेरहम है, ज़िंदगी बड़ी सख्त।
हम पाकर रहेंगे फिर भी ताज़ और तख़्त।

इरादे बुलंद हों तो आसमान झुक जाते हैं,
बहती धाराओं के भी रुख मोड़ दिए जाते हैं।
मुसीबतों को जो मुसीबत में डाल दें,
संकटों से जूझता हारें न कभी हिम्मत।
इक दिन वही पाकर रहता है ताज़ और तख़्त।
दुनिया बड़ी बेरहम है, ज़िंदगी बड़ी सख्त।

धुंध की चादर से क्या सूरज ढँक जाएगा?
बादलों की ओट से क्या चाँद छिप जाएगा?
जिसको आगे बढ़ना हो वो बढ़ ही जाता है,
एवरेस्ट जैसे शिखर पर चढ़ ही जाता है।
लक्ष्य को पाना ही जिसके लिए जन्नत,
इक दिन वही पाकर रहता है ताज़ और तख़्त।
दुनिया बड़ी बेरहम है, ज़िंदगी बड़ी सख्त।
हम पाकर रहेंगे फिर भी ताज़ और तख़्त।

दिलीप कुमार शर्मा
स्नातकोत्तर शिक्षक
के.वि. भरतपुर, राजस्थान

96
हमारे प्रेरक

शिक्षा और संस्कृति का संगम है अनमोल
माँ है हमारी प्रथम शिक्षिका, देती है अनुपम संस्कार
''त्याग, दया, स्नेह सभी से और बड़ों को दो सम्मान''।
पिता हमारे अनुशासन और व्यवहारिक गुणों से भरे हुए
सदा हमें हैं सिखलाते–
''स्वाभिमान और साहसी बन कर्मपथ पर रहो सदा डटे''।
अब आई बारी गुरुवर की, हमारे मन की काया है बदली
विद्यालय के मंदिर में वे विद्या का देते हैं पवित्र प्रसाद
संस्कारों के रंग–बिरंगे सुमनों से भर दिया हो, जैसे जीवन–संसार।
समाज के भी उपहारों को भला हम कैसे भूलेंगे –
''दोस्ती, क्षमा, मानवता के अनुपम रत्नों से झोली भर दी है''।
हम करते हैं अब राष्ट्र को भी नमन!
नमन! उन वीरों को पढ़ाते हैं, जो साहस का नित पाठ।
नित नए अनुभवों का कर नव–श्रृंगार,
संस्कृति चली है अपने द्वार।
संग में शिक्षा के गहनों से सजी हुई,
मानों कह रही है यह मनुहार–
''देखो मैं तो हूँ सुंदर और सद्गुणी
मुझे जो भी धारण करता, जग में अमरत्व को प्राप्त है करता।''

प्रज्ञा पाण्डेय
प्रशिक्षित स्नातक शिक्षिका (हिन्दी)
के.वि. क्रं. 1, भोपाल

97
हम बन पाखी

हम बन पाखी द्वार तुम्हारे, पीर हृदय की बांटने आए,
शीतल छैया की आशा में, जीवन दान माँगने आए
हम बन पाखी द्वार तुम्हारे...

घनी–घनी वनराजी में रहते थे हम हँसते गाते,
पंछी सारे भांति–भांति के शाखों पर थे डेरा डाले।
पलता था संसार खुशी का हर पल था नित नूतन सा,
किसे पता था ठौर हमारे, हमसे छीने जायेंगे।
बिन संगी साथी के जीवन कितना मुश्किल हो जायेगा
कठिन घड़ी में आस लगाए द्वार तुम्हारे टेर रहे हैं।
हम बन पाखी द्वार तुम्हारे...

विधि की सुन्दरतम तुम रचना चैतन्य बुद्धि से हो भरपूर
रहते हो सानंद ग्रहों में सब सुविधा से हो परिपूर्ण
आदम युग से साथ हमारा इस धरती के प्रांगण में,
कभी न माँगा तुमसे कुछ भी देते रहे सदा सम्पूर्ण,
आज मिट रहे जंगल पर्वत नदियों के तट सूने–सूने,
कड़ी धूप में उड़ न सकेंगे नन्हें प्राण झुलस जायेंगे।
हम बन पाखी द्वार तुम्हारे...

घर की उलझन काम का बोझ व्याकुल मन न पाता छोर
ऐसे में तब चुपके–चुपके किसी शाख पर हम गायेंगे।
टिवट–टिवट, टी.टी. मधुर तान से सारी थकान मिटा देंगे,
कुछ पल खुशियों के जीवन में हर संभव हम ले आएंगे,
हरियाली का स्वप्न लिए हम निर्भय जीवन का पा आलंबन,
कृतज्ञ तुम्हारे हो जायेंगे।

हम बन पाखी द्वार तुम्हारे, पीर हृदय की बांटने आए,
शीतल छैया की आशा में, जीवन दान माँगने आए।

कमलजीत दारा
उप–प्राचार्या
के.वि. क्रमांक– 3, दिल्ली छावनी

98
ज़िंदगी

कभी आईने सी साफ नज़र आती है ज़िंदगी,
कभी कोहरे सी धूँ बन जाती है ज़िंदगी!

थी रौशन पूरी शाम मेरे मोहल्ले की,
फिर भी कोने में एक रात बिताती है ज़िंदगी!

हमने लतीफ़े पढ़–पढ़ गुज़ार लिए सारे दिन,
करवटें बदल–बदल रातभर रोती रही ज़िंदगी!

आयना देख–देख मरहम लगते रहे उम्र भर,
और वो ख्वाबों में भी देती रही जख़्म ज़िंदगी!

आशियाना बनाते–बनाते रिश्तों का थक गई उम्र,
एक झोंका रुसवाई का और ढह गई ज़िंदगी!

संभाले रखा उसके दामन को सीने से लगाके,
और कफ़न हमारा दागदार कर गई ज़िंदगी!

मुस्कुराहट बिखेरते रहे उम्र भर अपने झोले से,
बदले में दो गम ईनाम दे गई ज़िंदगी!

सारे ज़माने की खुशियां मेरे प्याले में डाल दीं
फिर भी जाम खाली लगे तेरे बिना ए ज़िंदगी!

योगेश जेठवा
टी.जी.टी. अंग्रेजी
के.वि., राजकोट

100
चालबाजियाँ बड़े लोगों की, हम सब समझते हैं

चालबाजियाँ बड़े लोगों की, हम सब समझते हैं
पिछड़ों को न बढ़ने दें, हम सब समझते हैं।
देखिये हुनर ज़रा इन चालबाजों का
अगले को खींच गिरायें, हम सब समझते हैं।
आते हैं जहां[1] में ख़ुदा भी, इन्तज़ाम ये इसलिए
मस्जिद क्यूँ, मयख़ाने क्यूँ, हम सब समझते हैं।
फ़ायदा हो न औरों का, फायदा हो तो बस उनका
बात फ़क़्त[2] मतलब की, हम सब समझते हैं।
दौलत गई कहाँ वतन की? पूछे कोई हमसे
कैसा पैसा 'स्विस बैंक' में? हम सब समझते हैं।
हुआ धमाका आज़ फिर वतन के किसी शहर में
कौन भेजता है इन्हें? हम सब समझते हैं।

डॉ. शची कांत
संयुक्त आयुक्त (प्रशि.)
के.वि.सं., (मुख्यालय),
नई दिल्ली

[1]दुनिया
[2]सिर्फ़

101

Whom I Met?

When I met You,
While wandering in the
Wilderness of a desert
You appeared as perennial source of water
to quench my insatiable thirst.

When I met You,
While scrambling for right path
in the darkest hour of a dark night,
You showed me the way to move
Towards the brightest rays of divine light.

When I met You,
While screaming in the
Hottest day of an unbearable summer,
You showered your Icy blessing
On my agonized heart and soul .

When I met You,
While shivering in the
Coldest night of a chilly winter
I found in you the warmth and comfort
That I feel in the chest of my loving Mother'

I wonder whom I met,
Now and then, here and there,
Time and again in the happiest
as well most critical moment.

Whomever She may be,
I found her to be the closest friend,
Wisest philosopher and an ablest guide
Whom I could certainly trust.

Biranchi Narayan Das
Principal
K.V. Bhawanipatna
Kalahandi, Odisha

102

Mother's Heart Bitterness Block Blessings

I'm a woman, a mother, a stepmother,
so let me define
'Aunty" is what the name assigned

I care for my family and home
And loves my step kids like they are my own

I cook their meals and care for them in blues,
Anything that a kid's real mom would do

I can't be their mom, but best friend,
Who is always ready to lend her helping hand

I will console them when they feel sad,
Their success would make me glad,

I'll advise them and listen to their false story
And yet, it's the real mom that gets all the glory

I'll hide my tears, I really feel sad
When mother's day comes and just passes by

I feel like an outsider but try to fit in
I pray for your success, may you win
I make sure your birthday is one special day

And when mine is forgotten, I'll just look away

Your stepmother has done the best she could,
Though many times I was misunderstood

I won't always say that I love you
My care and concern will say it to you

Rashmi Jain Bayati
PRT
K V No-1 Shahibaug, Ahmedabad

103

Service to GOD

Child is closer to divinity
Teaching the child is a noble deed
School a temple of learning indeed
Service to child is service to God!

Many a role a teacher acts
And faithfully he follows
As parent, he asks the child
What he had for breakfast
A friend who knows his whereabouts
A benefactor who queries
How he gets school fee, books and uniforms?.
A psyche who identifies
The introverts and disabled learners.
A lender who lends his mind and heart
And ensures his child's learning
A proactive and not a reactive.

Service to man is service to God
And miles to go for perfection
Teachers teaching day and night
Learners bored and suffocated!
Researches and researches going on
But solutions vary to infinity

Why can't we start with meditation?
And find time for communication?
Just check previous knowledge
Carry on to motivation!

Smart classes are ample warrant
For they inculcate learning readiness
If the learner is unprepared
He innovates to suit his needs!

As classes soar to the crust
Let's reach to every child
Just for the sake of introspection
To know whether we are true teachers!

Who to be labelled true teacher?
One who transacts his knowledge
In merry pin without learner's bower
A true teacher knows well
The ins and outs of juvenile learning

He wipes tears of every child
And provides support with nature mild
Never once challenges the child's honour
Nor scribbles comments pejoratively

He never calls names and numbers them
For they being not numbers but members!
Never does he mark with red ink genderwise
And no longer dump any as slow learner
Never does he scold for a wrong attempt
For at times such one surprises
As the best brain and works wonders
Never does he call the parent for complaining
For he is not teaching but child only

Always he inculcates prolonged reading
And proceeds from known to unknown

And from fastidiousness to general
He prepares the child in such a way
To find tomorrows solutions to tomorrows problems
And not yesterdays' solutions to next days' problems
As is often done todays

Service to child is service to God
Allow a child liberty of expression
And peruses a child's works
Closely, neatly and regularly

Exam he conducts with fair and care
But his children squat tension free
Never does he work for record
But he records his work properly
Admits the blame for a child's failure
And proud as Apollo on his child's victory !

Service to child is service to God
Fatigued at evening
He introspetcs
Whether he is as follows
A man in Words worthian term
Who sits like a teacher
Gets up like a teacher
Dresses up; like a teacher
Talks like a teacher
Behaves like a teacher
Sleeps like a teacher
With nobody daring to discuss him
For service to child is service to God!

Mujeeb Rahman KT,
TGT (Eng)
KV Ottapalam

104

Sand Speaks and Rain Listens....!

(A Tribute to the Divine Clouds of Andaman)

Insatiable thirst creeps in
As the sand feels the loss of
The gush of waves caressing over it.
The anguish and the crave
Clad in black
Come down to unfold the
Message of the heaven.
The rain does listen to
The call of the sand;

Thus, learn we all a note,
Call on the rain
As you lose your hopes and deserted,
We all have our clouds above us,
And the rain does listen to
The call of the sand.

Jayanarasimha C K
TGT (English)
KV, Hassan, Karnataka

105

Humanity-Lost in Evolution

Birth of a race,
Glories conquered,
Lost in their hollow pride- Humanity
As they transcend,
The path yet tread
Lost in their rafts & curls -Humanity
Search it, in it,
A loss occurred
It takes years to reappear,
Lost in the maddening crowd- Humanity forever
Rise it will,
As phoenix did,
When tears flow,
For one day sure,
Yet, the losses will be hard to recoup,
But Humanity will dawn again
When its need will be felt dire

N Rakhesh
PGT (CS)
KV, Adoor

106

A Tribute to Mother Teresa

(A Great Teacher)

The City of Joy was divinely blest;

As Mother Teresa held the 'have nots" to her breast.

Life of the old, dying, diseased was wrapped in doom;

Her benign smile; healing touch removed the pall of gloom.

Nirmal Hriday housed the human beings in need;

Spread the message of love, universal brotherhood and peace.

Her generous, magnanimous heart kindled the desire to live;

In the hearts of the lonely, destitute, orphan, dying and sick.

For the crestfallen, grieving Mankind she toiled ceaselessly;

'Saint of the Gutters', Mother Teresa was called lovingly.

The World Canonized Mother Teresa as a Saint;

Who preached to the world the lesson of sacrifice and restraint.

We express our gratitude, homage and sincere tribute;

By taking an oath to follow her footsteps and avoid dispute.

Jayasree Bhattacharyya
P.G.T. (English)
K.V. New Cantt., Allahabad

107

A Teacher

Oh! God! Make me a teacher

To serve humanity much better

Day by day thy increase the quantum of my personality

To make my soul lighter and lighter

Oh! God! Make me a teacher.

I'll find my world in the hearts of lovely children

And that for them who know the want and meaning of life lesser

Oh! God! Make me a teacher.

Transform me into a wave of wind

That carries the fragrance of knowledge, wisdom, love and no fear

But not the foul of ignorance, hatred, weakness, unsocial and mala fides

To shower on the students

whose mind is so tender

Oh! God! Make me a teacher .

A day will come

A glorious new India with great intellectuals

Will lead the globe

With peace, harmony, fraternity, unity and integrity

From the blessing of Almighty God

In form of a teacher, morning will come

The war motive present society

Will smile with cheer, will smile with cheer

Oh! God! Make me a teacher.

Debasish Rout
PRT (Music)
K.V. Berhampur
Odisha

108

To My School Teacher

Through a trip down memory lane,
I still reminisce about the days
When you raised my morale
As the guardian angel
To help me keep the torch of hope alive
In quest of something I cherished most.

Sir, I shall never forget your persona,
Your words still ringing in my ears
Won't be lost even in the mists of time
For all that you have bestowed on me.

Now I count my blessings
To savour the sweet smell of success,
With the growth of my manhood,
Through the eyes brimming with the tears
Of ineffable joy.
I feel I am blissed out
Through taking a leaf out of your book.

Never in my wildest dreams
Did I think I would meet
The same person still etched on my heart
In front of the whole school today.

I prostrate myself before the Deity,
With polite murmurings of gratitude

For you to have given me a fresh heart
In the guise of an angel
Sent by almighty God
To lead me from darkness to light.
To me you are a breath of fresh air
At every step until I am laid to rest
Under the sod.
Now that I notice a ghost
Of a sunny smile
Flitting across your face,
I count myself lucky
And recapture the day
You patted on my back:
'How do you fill the days?'
With your words as gospel truth
Reverberating around me,
Linking the past to the present,
With the future beckoning me
Not to pause; not to look back
But to go miles and miles
Ahead of me to be a success story
For my first campus
That has nourished my whole being.

Jitendra Das
Librarian
KV No 3, Bhubaneswar

109
Future Perfect

Among the millions of rain drops
Falling from the high skies
All seemingly alike
And all headed to the ground

Not every drop was meant to fall on the parched land
To turn it lush green
Not all of it end up in oceans
For sailors to navigate

No, some make their way into
The crevices of hard rocks
And lay there hiding for eons
Before tumblig out when the rock cracks

Some fall into the mouths of little puppies
Playing with their tongues hanging out.
And some just roll into pans and pots
Kept open by the desperately thirsty

Some evaporate even before they hit the land
Heated by the heat around
Some freeze before they fall
And are hail and snow on the land.

Yet seemingly they begin alike
Embarking on a great adventure
Spurred on by the sun and wind
Towards an uncertain but worthwhile future

Similarly do our kids arrive
Looking all tiny and feeble
But they too will make it somewhere
With a little help and love from all of us.

Jaibala Prakash
Primary Teacher
KV Shalimarbagh
New Delhi

110

A Veritable Winner

Let the lights dazzle me,
Let the murk try my might,
Let Spring shower its raptures;
Let Autumn raise palls of gloom.

Let the tide cajole me,
Let the ebbs announce adieu,
Let avalanches impede my climb;
Let blizzards obstruct my descent.

Let an oak multiply my hopes,
Let a lily divulge the spell of my being,
Let my catamarans be led into dead waters;
Let tempests truncate my voyage.

I stay armed with a resolute will,
Pains do no longer pester me,
Pleasures can't ever dampen my resolve,
Barriers refuse to be my handicaps.

A faith steadies my cruise,
A pious vision paves my way,
A monumental mission sustains my aspiration,
A winner's verve never ages.

Dr. S. S. Aswal
PGT (English)
KV No. 2, Ambala Cantt.

111

Bonded Forever

I stepped into the portals of KV
Way back in the year 1970,
Little knowing that my Alma Mater
Would one day be my bread and butter.

The school days were indeed colourful
Friends I did amass in plentiful.
Every third year it was a new station
Thus I could travel all over the nation.

But one thing I eventually did find
That KVs are 'a one of its kind'.
Wherever you go, it's all the same-
The same mould, but with a different name.

The same prayer today too we sing,
To the same ideals even now we cling.
Once a KVian, you don't have to look back,
As you are well equipped to traverse along life's track.

The Competitions, Meets, Exhibitions and Fests,
Showcase talents at their best,
The spirit of oneness and brotherhood is instilled,
And with goodness and optimism the young hearts are filled.

Many a kite that has flown from the KVS base,
Has surpassed the rest in its respective race.
They have made the edifice of KVS strong,
And have echoed itsname loud and long.

The choice of the noblest profession, I never regret,
But unique opportunities in due course did I get.
I worked under a Principal, who had once been my teacher,
Who taught me the nuances of teaching, during his leisure.

And now I work with my student, who is now my colleague,
After twenty-nine years we have joined in league,
Such pleasant surprises, en route, KVS throws,
When, where and how nobody knows.

What I am today, to my alma mater I owe.
Before its holy feet, with both my hands I bow.
The bond of 47 years has been strengthened day by day,
'Let it ever be so,' is what I sincerely pray.

Rugmini Menon K.
TGT (English)
KV Kanjikode West,
Palakkad, Kerala

112
Query From Cosmos

Four, Three, two, one ..... Zero,
Started the countdown,
To launch a space-ship
Every minute detail also,
Thoroughly taken care of,
Green signal from the top scientist,
Took off the rocket with space-ship.
Travelling in the geo-orbit,
Wonderful to look at,
The tiny stars milky ways & galaxies, around,
Felt proud of human victory.
Sighed in great relief .....
But, for a short span,
Voices from cosmos,
Questions and suggestions,
Poured like thunder storms.
Pervaded everywhere, perturbing a lot.
No one around,
To support or protect.
Gathered all his courage,
To listen carefully .....
No answer to the questions,
Remained in the mind .....
For spoiling the nature,
For killing the wild life,

For exploiting the natural resources,
For polluting the environment.
For disturbing the ecological balance,
For causing global warming,
For creating biological magnification,
For deteriorating human values,
For increased terrorism and violence,
For separating out,
Totally from the nature.
For destroying everything,
In bits and parts.
All queries from the cosmos
Shot at him like sharp arrows.
Why? was the biggest question .....
For which was no answer,
Except to bow in shame,
And to realize the same
Returned to the mother-earth,
With much introspection and repentance.
Praying for one more chance,
To rectify his mistakes,
To make the earth, a heaven .....
Fully clean and green,
To make every soul
Happy and bloom.

J. Ramadevi
Principal
K.V No.1, Uppal, Hyderabad

113

KVS-Poetry in Progress

A small tentative step in nineteen sixty three
Nursing a dream of reaching out for the stars
Of training transferable minds almost for free
A bicycle entered a race to compete with cars

With a humble beginning and modest name
With meager resources and major problems
Central Schools Organization fought for fame
Wormed its way in to all renowned albums

Rechristened as KendriyaVidyalayaSangathan
Tried and turned out all the education fallacies
Headed the prestigious education marathon
By revamping the out dated education policies

Competing with others was never a bone of contention
Nor did we ever dream of vying for the first position
Excelling in what we do has always been our intention
Quality rather than quantity - our cherished ambition

Never did we in fifty years of outstanding service
Have forgotten the humane qualities to imbibe
Excellence and integrity have always been the advice
Root out inadequacies and evil intentions in one swipe

Crossing half century mark may be a significant landmark
No way does it spell the end of the road for us
Simply a time to review and raise the benchmark
A bus bay to relax and rest; not to do away with the bus

Be it a stroke of luck or kindness of fate
That has landed us in this wonderful world
Proudly does everyone in KVS associate
That every new endeavor does KVS herald.

N Shesha Prasad
PGT (English)
KV, AFS Begumpet
Hyderabad

114

Voyage Through Vidayalaya

Waving hand one enters
Saying bye she leaves
With wonder in the eyes
They express 'School is such a surprise'

Life in vidyalaya begins soon
While playful engagement is a boon
As students start to learn and grow
Their talent is nurtured for it to glow

They say 'Maths is so puzzling'
Stories in languages remain amusing
Science helps them to observe and think
While PT is for stretch and swing

Class is decked with the sketches and charts
Expression is channeled through performance arts
Patriotism is ingrained in assembly
With national days celebrations being it's complementary

They enter senior secondary with great stride
But behold ! as the pace becomes a competitive ride
Teaching becomes intensive to guide
While e-learning is there by the side.

Technology is not a substitute
As only good teaching makes students, astute
Labs helps them to develop concepts at root
Boards make Procrastination, no longer an excuse

Finally, A good teacher is one who plans a routine
For it helps the students to engage and become keen
Vidaylaya's values make our students to stand out amongst the sheen
As it leads to make their conscience clean.

JSV Lakshmi
Assistant Commissioner
Kendriya Vidyalaya Sangathan
Regional Office, Hyderabad

115

Hey ! Make My Day !

I walked around with a sullen face,
On one of those gloomy days,
Grumbling and mumbling and barking at all at sight,
And that too, with no actual reason to fight.

The kids in my class were a little wary,
For I depicted an image, a little scary,
I continued to behave like a zombie,
Thinking, 'How mean life can be!'

At the end of the class, this little girl approached ,
And handed over a piece of paper in four fold.
I opened it to see,
Wondering what it could be.

In it was the beautiful curve of a semicircle,
Facing upwards, as if to say 'Life goes a full circle',
I looked up at the little one,
She smiled a smile as bright as the sun.

And the room reverberated, when the class chorused,
'We love you M'am! Keep smiling as always!"
'Thank you my dear ones", I beamed and heard myself say,
'Thank you very much for making my day!"

B. Prema
PRT
K.V., CLRI, Chennai-20

116

Tribute Infinite

I stand outside in the sun,
With the reins you gave me,
To turn the flowers to His grace .
I'm rich immensely--
With the love you lightened my heart ,
With the light you lit in my soul,
To kindle the same to the innocence ;
Through the letters hiding magic in it--
That seem mute and mighty in the pages of knowledge ,
But burst with revelations in each breath
As we welcome them to our fleeting moments .
I'm blessed to be a disciple of yours --
Whose feet my soul touches
In every breath of mine with prayer
For leading me to this home of flowers ,
Without which I'm nothing...but
An eternal traveller through these temples
To enliven the divinity of you in me.

B. Lekha
TGT (English)
K.V. No. 1 JIPMER Campus (Shift-1),
Puducherry

117

The Altruist

The simple fine little lady
With a dimple on her face
Lives a life, which is selfless.
She is the kind of a soul ,
God would have made

She remains as a mentor for the children
Without expecting anything in exchange
She gives her best and doesn't reflect
As her heart seems to be clear, as a white page

There's a part of her own
She doesn't want to show
She's lost in her own little sphere,
That no one would know
Everyone beholds her,
But no one noticed,
The pain that she holds.

She gives her heart, her mind and her soul
But her delight suddenly turned to despair
And her heart left with a hole
As, no one looked back at her.
But, why the god made her so kind
Whose selfless deeds are forgotten?
God said: She is a selfless soul!

Manju Pathak,
PGT (Bio)
K V Koliwada

118
The Blue Hills

I see the far-off blue hills

Decked in puffs of white cloud,

The rainbow beads, the red coloured cloths, the robust barrel beats;

Mother Nature is still there in the Naga spear and rice bear.

The story of man and mother together

The food, the fashion, the very fulcrum of the misty mountains,

The pristine glory of human civilisation-

The splendour of the sunshine,

The grandeur of the ethereal clouds,

And the mystic of the blue hills,

Blooms in the cradle of Naga life.

But then in the scope of my vision

Is also seen a microwave tower

Rearing its head like the skeletal remains of a hunted Jurassic animal,

A symbol of our civilization

That has endeavoured to decorate

The blue hills and the white clouds not with flowers and foliage,

But with steel and iron;

And then I also see the AK-47

Making a hell out of heaven,

The devil's brush that paints the white clouds dark and blue hills red

And we all wait for the return of the dead;

And behind the mask we see the glaring teeth and dried tear,

And then we realise all is not well when peace is ruled by fear.

Saptarshi Majumder
PGT (English)
KV CRPF Amerigog
Guwahati, Assam

119

Rise

Rise...

Not to claim,

What the lives of some loved ones

Might have contained,

Nor to flee,

Towards some untraded destination

That's unsure of glee.

Rise, not to mourn

The depletion of arms

Nor to scare

Of inevitable harms

Nor to strive,

For some liberation unfound,

Nor to duel with

The conscience unbound

Rise,

To awake

The dormant pale leaves

And to enliven the paralytic beliefs

Rise.., and leave

The cold, dead hand of love,

Proceed to bestow

What you couldn't ever have

In hope to fulfill someone's lack

To plead earnestly

For the wellness of someone unknown,

To flow tirelessly towards some obscure zone

Free, delicate, latently aware,

Be the care

For a stranger there

Rise..., and amplify

The drought with moisture

Of blessing, of contentment,

Of saturation

Rise....!!!

Shashi Wala
PGT (English)
KV Pithoragarh

120

Walls

Walls only walls- surround me
High and Might -arrest me
Leave me helpless and despair
Walls- obstruct me and my gaze beyond.

Walls of indifference, walls of loneliness
Walls of intolerance, walls of ignorance
I jump, climb, creep, break
Only to hurt myself.

Walls choke me, strangle me
Walls obsess me. Repress me
They draw closer and closer upon me
With catacombs above they bury me.

'Who built you" I scream at them
The echoes of silence- I hear.
And slip into abyss of apathy.
clarion of doom gulps me.

Chilukuri Madhuri
PGT(Eng)
KV Vijayapura (Karnataka)

121

Voice of A Woman

God wanted to be everywhere
That's why he made Mothers.
Yet why am I called 'the weaker sex'?

I am the most tolerant, compassionate & kind
I bear exploitation & indifference of every kind.
Yet why! Oh why am I the weaker_____?

I am more loving and caring & also responsible
Of all the creations, I am The Inevitable,
Yet why am I considered the _____?
Can someone give me an explanation understandable?

My birth is debated & decided otherwise
Even before I am born
And when I am finally born, my birth is not heralded,
Like my counterpart whose birth
Is welcomed and celebrated with a clang.

Sometimes I am sold like hotcakes
And when I am betrothed I bring gifts in bounty for all.
Still I am abhorred for one reason or all.

Still looking up, Can you look at my other-side
I am the incarnation most holy
I am the bearer of the progeny
The most influential, the cause of every success and downfall,

The leader, the guider, the activist,
The educator, and the accommodator,
More than anything
I shed all my feelings, hence Live longer
Surely, I don't debate, but allege
I AM stronger, STRONGER.

Sagaya Mary P
PGT (English)
KV Gooty

122
A Waking Dream

Paradise. ....My home
My Kashmir
Envy of the world
But cradle of my dreams
My peace of mind
Guardian of my joys

Time has flown
Dreams dashed,
What lingers is just fragrance
of Pine ,
Gusts of memories
Flood of colours
Colours of sunset

Colours of lush green meadows
Of golden autumn
Of silver doves
Of blushing clouds
Serene snowy peaks
Of rainbow shying away in clouds
Of blessings from my Gods

Now
Away in deserts, baked by heat

Cool fragrant breeze
My small hamlet
Great green Chinar
Pearls of waterfalls
Deep ,dense ,delving shades
Songs of BULBUL
Beckon me

My every attempt to embrace
My motherland is thrashed by
Blood , bullets and blasts

May I ask

WHEN HOW AND IF

Can I bow to my soil
Land of saints
Pray in small village temple
Can I ever

Soothe My wounded soul
My shattered dreams

Can my EXILE ever end?
EVER. EVER. EVER

Veena Lidhoo
PGT (English)
K.V. No 2, Delhi Cantt.

123

What Lies Beyond?

What lies beyond, I care not
Work, love, chatter unceasing
Undulating time disarms me
Intrepid traveller, I never seek to know
Arrogant youth, no time to stop, just grow

The hair has turned grey
The gait has lost its spring
Work, love, chatter are ceasing
Wily life and renegade time
Make me question what lies beyond.

The present is a haze
I am trapped in a maze
Old memories haunt me
My childhood laughs with glee
Time is ticking by

Calmly I lie holding my child's hand,
An itinerant worker,
Ready to bid goodbye
I seek the light, cross the line
And step into the shadowy beyond.

Pallavi Gogoi
PGT (English)
K.V., CRPF Amerigog
Guwahti, Assam

124

The Path of My Life Has Been Blessed

No, I have not been cheated by life,
Nor deprived of any of its gifts.
With a generous share of warmth and light
The path of my life has been blessed;

And with folk tales for my quivering memory,
And with songs from my native land,
And with priests and Orthodox holidays-
With new holidays set to new songs.

With traditional winters in remote villages,
Where, stirred with wonder at the new world,
The singing groan of distant sledges
Far away, beyond the woods, is still heard.

With each year's return to springtime,
When land become sea and river flood;
Rising sap in the bark of the pine,
Swelling frog-spawn in the mud.

With summer storms, mushrooms and berries,
Dewy paths in grass which stands tall and thick,
All a shepherd's joys and sorrows,
And tears poured over a favourite book.

Early sufferings, too, and pain,
And childhood's dreams of revenge.
The days you could not bear to sit in school,
These times without shoes, without clothes.

Everything-joyless poverty too,
In that dark corner of my youth.
No, life has cheated me of nothing,
Nor passed me by with its gifts.

It has generously granted me health,
And energy to last my whole life;
An early friendship, and a love
Of a kind which never comes twice.

And fame for my immature fancy-
The sweet poison of lines and of words-
And a mug of rough home-brewed coffee
With singers and philosophers- my friends

Some fiery and quarrelsome, some quiet,
With words never simple, always sharp,
They discuss the old power and the new,
They separate wrong the right....
So I could live with these people,
Knowing all the events in their lives,
I was not spared my thirtieth year,
Nor my forty-first, nor many more...

Life has put so much into my heart
That all I can do now is wonder
At the sharpness of the frosts and the heat,
The extremes it is able to bear.

So what of those minor misfortunes,
Those humiliations along the way!
I know that real good fortune
Is not to let life pass us by.

Not to quietly keep our distance,
And watch it pass by with indifference;
But to know with our toiling backs
The cruel sweat it exacts.

I see all I have contrived and achieved
As so paltry, so embryonic,
Such a minuscule contribution
To the people's total needs.

It is this mutual guarantee
Which softens all ordeals.

Difficult days still lie ahead of me,
But I will never let them frighten me.

Swarn Lata Sharma
TGT (Mathematics)
KV Moscow

125
AU Réveil

Au Réveil
Countless Buddhas!
I – one amongst the multitude
No– I don't need a renunciation
to awaken.
Death – awakens me
Death-
The leveller that marks perimeters to
Ambition and revelry,
Egotistical thought,
To the illusion of control,
And to the self.
Every dismal loss augurs–
All that we see, feel or bond with
In the ceaseless realm of life
Is ephemeral and shall dwindle soon
like an unreal enigma
And we be wiped to obscurity.
Yet for the fear of losing life
I clutch its fabric as if to never let it go
While it pulls itself away sardonic in the eye.
The discernment is absolute!

Vimmy Singh
PGT (Englsh)
K.V., Sector VIII, R.K. Puram,
New Delhi

केन्द्रीय विद्यालय संगठन, नई दिल्ली

Kendriya Vidyalaya Sangathan, New Delhi

18, संस्थागत क्षेत्र, शहीद जीत सिंह मार्ग, नई दिल्ली–110016 (भारत)

18, Institutional Area, Shaheed Jeet Singh Marg, New Delhi-110016 (India)

Website : kvsangathan.nic.in